ओ३म्

आर्य जगत

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 23 अगस्त 2015

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार 23 अगस्त 2015 से 29 अगस्त 2015

श्रावण.शु. 08 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 34, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

ऋषि दयानन्द का सच्चा-भक्त पहुँचा 'राजभवन'

आचार्य देवव्रत बने हिमाचल प्रदेश के नये राज्यपाल

राज्य के 27वें राज्यपाल ने संस्कृत में शपथ लेकर रचा इतिहास

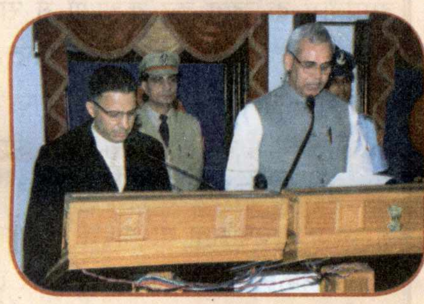

10 अगस्त, 2015 को जारी आदेश के अनुसार आचार्य देवव्रत, प्राचार्य, गुरुकुल कुरुक्षेत्र, को हिमाचल प्रदेश का राज्यपाल नियुक्त कर दिया गया। इस समाचार के आते ही आर्य–समाज परिवेश में हार्दिक प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। आचार्यजी की यह उपलब्धि उनकी सतत साधना, तपस्या, संस्कार और गौ–सेवा के प्रति प्रतिबद्धता का परिणाम माना जा रहा है।

12 अगस्त, 2015 को हिमाचल प्रदेश के राजभवन में एक सादे–समारोह में प्रदेश के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर ने आचार्य देवव्रत को पद और गोपनीयता की शपथ दिलाई। इससे पूर्व हिमाचल प्रदेश के मुख्य सचिव श्री पी. मित्रा ने राष्ट्रपति द्वारा जारी आचार्य देवव्रत की नियुक्ति का अधिपत्र पढ़ा। आचार्यजी ने संस्कृत में शपथ लेकर प्रदेश में एक इतिहास रच दिया। संस्कृत भाषा में शपथ लेना इस आयोजन पर उपस्थित प्रदेश के मुख्यमंत्री राजा वीरभद्र सिंह, विधान–सभा में विपक्ष के नेता श्री पी.के. धूमल, विधान–सभा अध्यक्ष श्री बृजबिहारी लाल 'बुटेल' सहित शपथ–समारोह में उपस्थित प्रदेश के नेताओं के लिए राज्य के इतिहास में अपूर्व घटना थी।

पद संभालते ही महामहिम राज्यपाल ने हिमाचल प्रदेश को प्रत्येक क्षेत्र में एक आदर्श राज्य बनाने का संकल्प दोहराया। आचार्य देवव्रत का जीवन शिक्षा, चिकित्सा और स्वास्थ्य के मिशन से लम्बे समय तक जुड़ा रहा है। उनकी शिक्षा दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार से आरंभ होकर गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर (हरिद्वार), पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, में हुई, जिसके बाद उन्होंने 'ऑल इण्डिया काउंसिल फॉर नेचुरोपैथी' से 'डॉक्टर ऑफ नेचुरोपैथी एण्ड योगिक साइंस' की डिग्री प्राप्त की। पैंतीस वर्षों की कठिन तपस्या से आचार्य देवव्रत जी ने गुरुकुल, कुरुक्षेत्र को वैदिक और आधुनिक शिक्षा का एक राष्ट्रीय केन्द्र बना दिया। इस गुरुकुल के बच्चों ने शिक्षा, खेल और अन्य सभी क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा का सिक्का जमाया है। गुरुकुल, कुरुक्षेत्र जैविक खेती, प्राकृतिक चिकित्सा तथा देसी गऊ के अनुसंधान, योग तथा अन्य संबंधित क्षेत्रों का राष्ट्रीय संस्थान बन गया है। आचार्यजी इन सभी कार्यों को करते हुए वैदिक मूल्यों के प्रचार–प्रसार के लिए लेखन–कार्य और युवाओं में सामाजिक और नैतिक मूल्यों की चेतना उत्पन्न करने के लिए शिविरों का राष्ट्रीय स्तर पर आयोजन करते रहें हैं। हाल ही में आचार्य देवव्रतजी के मार्गदर्शन में अम्बाला में 'चमन वाटिका अन्तर्राष्ट्रीय गुरुकुल' की स्थापना हुई। आयुर्वेद का पठन–पाठन, वृक्षारोपण तथा यज्ञ–चिकित्सा द्वारा प्रदूषण मुक्त समाज की रचना करना आचार्यजी का प्रिय सरोकार रहा है।

आचार्यजी को उनकी उपलब्धियों और सेवाओं के लिए समय–समय पर विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित किया जाता रहा है। जैसे–2002 में समाज में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए अमेरिकन बायोग्राफिकल इंस्टीट्यूट की ओर से 'अमेरिकन मेडल ऑफ ऑनर', 2003 में 'भारत ज्योति अवार्ड', 2005 में सीएनआरआईडी की ओर से 'सर्टिफिकेट ऑफ ऑनर इन सर्विस ऑफ रूरल इंडिया' से सम्मान। 2007 में 'समाज सेवा सम्मान', 2009 में हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री प्रेमकुमार धूमल द्वारा 'हिमोत्कर्ष राष्ट्रीय सम्मान', 2009 में ही 'जनहित शिक्षक श्री अवार्ड', 2011 में 'अक्षय ऊर्जा सम्मान', हरियाणा सरकार की ओर से 'अक्षय ऊर्जा अवार्ड–2012' सम्मान, उपभोक्ता मंत्रालय के पूर्व सचिव द्वारा 'प्राचीन एवं नैतिक मूल्यों के संरक्षण हेतु सम्मान–पत्र' इत्यादी।

आचार्यजी के अनुभव, ज्ञान और निष्ठा को देखकर भारत–सरकार ने उन्हें 'आयुष विभाग' की टास्क फोर्स का सदस्य मनोनीत किया। आप 'चौधरी चरणसिंह कृषि विश्वविद्यालय' के बोर्ड ऑफ मैनेजमेंट के भी सदस्य हैं।

जनवरी, 1959 को हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्र में जन्में आचार्य देवव्रत अपने बाल्यकाल से ही ऋषि दयानन्द और वेद के सच्चे अनुयायी रहे हैं। डी.ए.वी. संस्थाओं और आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रति आचार्यजी का विशेष स्नेह रहा है और वे इन संस्थाओं के माध्यम से देश में युवाओं के चरिण–निर्माण को लेकर चल रहे वैदिक कार्यक्रम के सक्रिय मार्गदर्शक व सहयोगी रहे हैं। डी.ए.वी. के शिक्षकों, प्राचार्यों की प्रशिक्षण कार्यशालाओं में आप अत्यंत प्रभावकारी उद्‌बोधन देते रहे हैं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं डी. ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति के प्रधान श्री पूनम सूरीजी ने आचार्यजी को इस उपलब्धि के लिए हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ दीं और आशा व्यक्त की कि उनके मार्गदर्शन और संरक्षण में हिमाचल प्रदेश में आर्य समाज और डी.ए.वी. कार्यक्रमों को नये आयाम मिलेंगे।

ओ.एस.डी.ए.वी. कैथल में हुआ युवा वैदिक चेतना एवं योग-शिविर का आयोजन

ओ.एस. डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कैथल में आर्य युवा वैदिक चेतना एवं योग–शिविर का दो चरणों में आयोजन किया गया। प्रथम चरण छात्राओं तथा द्वितीय चरण छात्रों के लिए आयोजित सुनिश्चित किया गया था। इस शिविर का मुख्य उद्‌देश्य विद्यार्थियों का शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक विकास करना था। शिविर का शुभारम्भ एवं समापन विद्यालय की प्रधानाचार्या एवं क्षेत्रीय निदेशिका श्रीमती सुमन निझावन के कर कमलों द्वारा किया गया। शिविर के दौरान विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास हेतु विभिन्न वैदिक विद्वानों को आमंत्रित किया गया। जिसमें डॉ. प्रमोद योगार्थी हिसार, प्रो. ओम कुमार जीन्द एवं स्वामी सोवानन्द गुरुकुल कालव मुख्य थे। इसके अतिरिक्त देहरादून से आई डॉ दीपशिखा ने विद्यार्थियों को 'संतुलित आहार पर व्याख्यान दिया। शिविर में विद्यार्थियों को जुडो कर्राटे, योग, लेज्यिम, डम्बल, लाठी संचालन आदि का प्रशिक्षण दिया गया एवं प्रतिदिन यज्ञ का आयोजन किया गया। समापन समारोह पर आमंत्रित अभिभावकों ने शिविर के आयोजन मुक्त कंठ से सराहना की। अंत में प्रधानाचार्या जी ने अपने संदेश में अभिभावकों से अनुरोध करते हुए कहा कि वे बच्चों द्वारा सीखी गई कलाओं को अपने जीवन में ढालने के लिए उन्हें निरन्तर प्रोत्साहित करते रहें। उन्होंने उपस्थित सभी अभिभावकों का धन्यवाद किया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 23 अगस्त, 2015 से 29 अगस्त, 2015

आओ, देवों के मार्ग पर चलें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

आ देवानामपि पन्थामगन्म, यच्छक्नवास तदुनुप्रवोढुम्।
अग्निर्विद्वान्त्स यजात् स इद्धोता, सोऽध्वरान्त्स ऋतून् कल्पयाति।।

अथर्व 16.56.3

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(अपि)** क्या **(देवानां)** देवों के **(पन्थां)** मार्ग पर **(आ– अगन्म)** [हम] चलें? [हाँ], **(यत्)** यदि **(तत् अनुप्रवोढुम्)** उस पर स्वयं को चलने में **(शक्नवाम)** समर्थ हों। **(अग्निः)** आत्मा **(विद्वान)** विद्वान् है, **(सः)** वह **(यजात्)** यज्ञ करे, **(सः)** वह **(इत्)** सचमुच **(होता)** होम–निष्पादक है। **(सः)** वही **(अध्वरान्)** यज्ञों को और **(सः)** वही **(ऋतून्)** ऋतुओं को **(कल्पयाति)** रचाये।

● आओ, हम देवों के मार्ग पर चलें। यज्ञ के तंतु से बंधे रहना ही देवों का मार्ग है। देखो,ये सूर्य, चन्द्र, अग्नि, पृथिवी, ऋतु, संवत्सर आदि देव कैसे 'यज्ञ' के मार्ग पर चल रहे हैं।कभी उनके यज्ञ–पालन में व्यतिक्रम नहीं होता। शरीर में भी मन, बुद्वि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि देव कैसे संगठित हाक देवयान का अवलम्बन कर शरीर–यज्ञ को चला रहे हैं। समाज में भी 'देव' पदवी को पाये हुए महापुरुष 'यज्ञ' के ही पथ पर चल रहे हैं। और, सबसे बड़ा देवों का देव परमात्मा भी निरन्तर देव–मार्ग पर चलता हुआ इस ब्रह्मांड–यज्ञ का सम्पादन कर रहा है। हम चाहते हैं कि हम भी इस देव–मार्ग के पथिक बनें। क्या तुम कहते हो कि इस मार्ग पर चलना अति कठिन है, तलवार की धार पर चलने के समान है, अतः पहले अपनी शक्ति को तोल लो कि तुम इस पर स्थिर रह भी सकोगे या नहीं, उसके पश्चात् इस मार्ग पर पग बढ़ाना? सुनो, हमने अपने सामर्थ्य को भलीभांति परख लिया है। हमारा आत्मा 'अग्नि' है, अग्रणी है, तेज का पुंज है, ज्योतियों की ज्योति है। वह 'विद्वान' है, देवों की राह पर चलना और चलाना जानता है। अतः हमें देव–प्रदर्शित यज्ञ–मार्ग भटक जाने का कोई भय नहीं है। हम निश्चित होकर उसके हाथों में अपनी 'यज्ञ' की पतवार सौंप रहे हैं। वह 'होता' है, यज्ञ– निष्पादन में कुशल है,संस्कृत हवि का होम करने में निष्णात है। वह जानता है कि यज्ञ को 'अध्वर' अर्थात् हिंसा–रहित ही होना चाहिए। भद्रजनों को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया गया यज्ञ यज्ञ नहीं है। हमारा आत्मा 'अध्वर' यज्ञों को रचाये और वही यह भी देख कि किस यज्ञ के लिए कौन–सी ऋतु, कौन–सा समय उपयुक्त है क्योंकि काल–अकाल का विचार किये बिना प्रारम्भ किया गया यज्ञ सफल नहीं होता। आओ, हम देव–पथ के पथिक बनें। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भक्त और भगवान्

● महात्मा आनन्द स्वामी

पूज्य श्री आनन्द स्वामी जी की कथाएँ जीवन देने वाली, शान्ति देने वाली और आत्मा को ऊपर ले जाने वाली हैं। आर्यसमाज एक आन्दोलन है जिसका उद्देश्य देश, भाषा, जाति, बिरादरी, रंग और नस्ल के भेदभाव से ऊपर उठाकर मनुष्य को उस ऊँचाई तक ले जाना है जहाँ पहुँचे बिना उसका कल्याण नहीं हो सकता।

पूज्य श्री आनन्द स्वामी जी की कथाओं में कहीं कोई साम्प्रदायिकता नहीं; एक भाषा, एक प्रदेश और जाति का समर्थन नहीं। हर धर्म के, हर सम्प्रदाय के लोग इन कथाओं में सम्मिलित होते रहे हैं। इनसे आत्मिक शान्ति और मस्तिष्क की ज्योति प्राप्त करते रहे हैं।

स्वामी जी ने यह कथा आर्यसमाज लोधी रोड, नई दिल्ली के वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य में की थी। ज्ञान, कर्म और उपासना आत्मा को अनन्त आनन्द की ओर ले जाने वाले तीन साधन हैं। प्रस्तुत कथा में पूज्य स्वामी जी महाराज ने उपासना या भक्ति के साधन का वर्णन किया है। आइए आनन्द कथा प्रवाह में अब भक्ति की हिलोरें लें।...

ओ३म् त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ।
अधा ते सुम्नमीमहे।। (ऋ. 8 । 68 । 11)

हे विश्वदेव! सब दिशाओं के स्वामिन्! सर्वत्र विद्यमान, सबको बसानेवाले अन्तर्यामी प्रभो! तेरा ज्ञान अनन्त है, तेरा कर्म असीम है। तू हमारा पिता है, तू ही हमारी माँ। हे महारानी! हम सब लोग मुझसे सुख की भीख माँगते हैं।

(इस मन्त्र को पढ़कर पूज्य स्वामी जी के कथा आरम्भ की–)

ऋग्वेद के सातवें मण्डल के छियासीवें सूक्त में एक मन्त्र आता है–

उत स्वया तन्वा सं वदे तत्कदा
न्वन्तर्वरुणे भुवानि।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा मृलीकं
सुमना अभिख्यम्।।

(ऋ. 7।86।2)

हे स्वामिन्! हे सुन्दरतम! विवाह के पश्चात् जैसे कन्या के लिए वर होता है उसी प्रकार हे मेरे वरुणदेव! कब आयेगी वह घड़ी जब मैं अपनी आत्मा से तुम्हारे साथ बातें कर सकूंगा, जब तेरे हृदय का प्यार पाकर, तुझसे मिलकर एक हो सकूँगा? कब आयेगी वह घड़ी जब तू प्यार और आदर के साथ मेरे गीतों को स्वीकार करेगा और मैं अच्छे मन से तेरे दर्शन पा सकूँगा? हे परम सुख को देने वाले, हे दया और आनन्द के भण्डार!

इस मन्त्र में मनुष्य की जो पुकार है उसे मैंने संसार में सर्वत्र सुना है। जहाँ कहीं भी गया, और गया बहुत स्थानों पर– प्रत्येक हृदय से उठती हुई, यही रोती हुई आवाज सुनाई दी। प्रत्येक स्थान पर पहुँचकर ऐसा लगा कि गुरु नानकदेव जी महाराज ने जो कहा कि–

नानक दुखिया सब संसार

तो बिल्कुल सत्य कहा। पिछले एक सौ वर्षों में इस संसार ने भौतिक विज्ञान में बहुत उन्नति की है, बहुत से आविष्कार किये हैं। इन आविष्कारों और इस उन्नति को देखकर संसार का मानव अपने–आप को इस प्रकार भूल गया है जैसे छोटे–छोटे बच्चे सरकस का खेल देखकर खाना–पीना भूल जाते हैं। आज का मानव चकित है कि इसके चारों ओर संसार में क्या हुआ जाता है? कभी समय था जब लोग सोचते थे, मैं क्या हूँ? यह जीवन क्यों मिला? इसका उद्देश्य क्या है? यह परिवार क्या है? संसार क्या है? उस समय लोग आत्मा की खोज करते थे, उन लोगों को ढूँढते फिरते थे जो आत्मदर्शी हैं (जिन्होंने आत्मा के ज्ञान को प्राप्त किया है)। परन्तु पिछले सौ वर्षों में विज्ञान ने जो उन्नति की, उसकी विद्यमानता में आत्मदर्शन की बात करना भी कुछ लोगों को समय नष्ट करना–सा प्रतीत होने लगा है। एक समय था जब आत्मदर्शी महात्माओं को संसार में सबसे मुख्य समझा जाता था। फिर समय आया जब बड़े–बड़े योद्धाओं को सबसे मुख्य समझा गया। वह समय भी चला गया। तब धनवानों को सबसे मुख्य माना गया। लोग इनके पीछे भागने लगे। यह समय भी व्यतीत हो गया तो राजनैतिक लीडरों का समय आया। उनका आदर होने लगा, उनके पीछे लोग दौड़ने लगे। अब वह समय भी व्यतीत हुआ जा रहा है। एक विचित्र समय आ गया है। सब लोग फिल्म–एक्टरों और ऐक्ट्रसों का दर्शन पाना चाहते हैं। पता चल जाय कि अमुक स्थान पर कोई ऐक्टर आया है या ऐक्ट्रेस आई है, तो इस प्रकार भीड़ लग जाती है जैसे मुक्ति का द्वार वहीं खुला है।

ऐसे समय में भी आत्मदर्शन की, भक्त और भगवान् की बात कहूँ तो सचमुच वह अनहोनी-सी बात लगेगी- भौतिकी पूजा के इस युग में असमय का राग। परन्तु सोचकर देखिये तो ज्ञात होगा कि असमय की रागिनी नहीं। यह वह बात है कि जिसके बिना मनुष्य के जीवन में कभी शान्ति नहीं आती। उसके बिना उनका जीवन दुःखी और अधूरा रहता है।

विज्ञान के जिन आविष्कारों ने मानव को मोहित किया है वे पिछले लगभग दो सौ वर्षों में हुए। कुछ आविष्कार इससे पूर्व भी हो चुके थे। अधिकतर और बड़े-बड़े आविष्कार पिछले एक सौ वर्षो मे हुए। उन्हें देखकर मनुष्य चकित हुआ अवश्य, परन्तु इनसे हुआ क्या? बड़े-बड़े वैज्ञानिक यदि ये आविष्कार करते रहे तो वे चाहते क्या थे? इसका सीधा-सा उत्तर है- सुख। श्री गुरु नानकदेव जी महाराज ने सत्य कहा कि सारा संसार दुःखी है। प्रत्येक व्यक्ति सुख की खोज में संलग्न है। सुख तीन प्रकार है- शारीरिक सुख, मानसिक शान्ति और आत्मिक आनन्द। इन असंख्य आविष्कारों में जो विज्ञान के क्षेत्र में हुए, आत्मिक आनन्द मिलने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। आत्मिक आनन्द से इन आविष्कारों का कोई सम्बन्ध नहीं। मानसिक शान्ति भी इनसे उत्पन्न नहीं हुई; अपितु पहले से कम हो गई है। इसके कारण अशान्ति, बेचैनी और भय में वृद्धि हुई है, शान्ति में नहीं। हाँ, शारीरिक सुख के कुछ साधन अवश्य उत्पन्न हुए हैं। अब सरलता से दीपक जल जाता है। गला खराब करने के लिए बर्फ मिल जाती है। सहनशक्ति को कम करने के लिए हीटर की गर्मी मिल जाती है। संसार में सबसे बड़ा सुख है आत्मिक आनन्द, उससे कम मानसिक और सबसे छोटा है शारीरिक सुख। विज्ञान ने इस सुख के लिए साधन उत्पन्न किये हैं, अवश्य, किन्तु क्या इनसे वास्तव में शारीरिक सुख मिलता भी है? ओषधियाँ बहुत हैं, परन्तु रोग भी तो बहुत हो गए। आविष्कार बड़े हैं, उनसे उलझनें भी बढ़ गई हैं।

और देखिये- शारीरिक सुख को उत्पन्न करने वाले ये साधन अब ही उत्पन्न नहीं हुए, बहुत बार उत्पन्न हुए, बहुत बार नष्ट हुए। वास्तविकता यह है कि प्राचीन काल में यह विज्ञान जिस शिखर पर पहुँचा, वहाँ अभी पहुँचा नहीं है। अभी यह और उन्नति करेगा, और आगे बढ़ेगा। मैं इसकी निन्दा नहीं करता, परन्तु इससे कोई सुख मिला हो, ऐसा मुझे तो दिखाई नहीं देता। सुख के इन साधनों के होते हुए मानसिक शान्ति का कोई चिन्ह तक नहीं। यदि विज्ञान की उन्नति से मानसिक शान्ति मिल जाती तो सबसे अधिक शान्ति यूरोप और अमेरिका से होनी चाहिए थी। परन्तु क्या अमेरिका और यूरोप का कोई भी देश, कोई भी शासन, कोई भी जाति हृदय पर हाथ रखकर कह सकती है कि उसे मानसिक शान्ति मिल गई है? यदि मिली होती तो यह दौड़ धूप किसलिए? यह संघर्ष? ये ऐटम बम, हाइड्रोजन बम किसलिए? आज भी इस प्रकार अशान्त हैं जैसे वे पहले कभी शान्त नहीं थे।

और आत्मिक आनन्द? इनमें से कई लोग आत्मा और ईश्वर को ही नहीं मानते, फिर आत्मिक आनन्द की बात कैसे समझेंगे? इलाहाबाद के महाकवि अकबर ने इनके सम्बन्ध में बिल्कुल ठीक कहा है-

भूलता जाता है यूरोप आसमानी बाप को।
बस खुदा समझा है उसने वर्क़[1] को और भाप को।।

(1. बिजली।)

किन्तु बर्क़ और भाप को ईश्वर समझनेवालों ने इन आविष्कारों से प्राप्त क्या किया? ये ऐटम बम और हाइड्रोजन बम जो एक ही क्षण में लाखों मनुष्यों को मौत की नींद सुला सकते हैं, रूस और अमेरिका के वे रॉकेट जो चाँद से आगे जाते हैं, मैं उन्हें बुरा नहीं कहता। परन्तु ये रॉकेट जिन पर हम अभिमान करते हैं वास्तव में हैं क्या? प्राचीन समय में लोग विवाह आदि के अवसर पर 'हवाइयाँ' चलाते थे; ये तनिक बड़ी हवाइयाँ हैं। परन्तु ये बड़ी हों या छोटी, सोचकर देखिये कि इनसे मनुष्य को तमाशे के अतिरिक्त और मिला क्या? तमाशा देखकर हम चकित होते हैं परन्तु सुख तो उत्पन्न नहीं हुआ। शान्ति तो मिली नहीं। आनन्द तो कहीं दिखाई नहीं दिया। विज्ञान के मार्ग पर आगे बढ़ना चाहते हो तो अवश्य बढ़ो, परन्तु ध्यान रखो सुख कभी मिलेगा नहीं, शान्ति नहीं मिलेगी, आनन्द सदा एक स्वप्न बना रहेगा। इसका कारण यह है कि सच्चा सुख, शान्ति और आनन्द इस माया में नहीं। यह खेल दिखा सकती है अवश्य, आत्मा चाहे तो इसके साथ खेल कर भी सकता है, परन्तु सुख, शांति और आनन्द केवल उस समय मिलते हैं जब आत्मा और ईश्वर का मिलाप होता है, जब दोनों बातें करते हैं, दोनों एक-दूसरे के प्यार को अपने हृदय में धारण करके एक-दूसरे के हो जाते हैं।

इसीलिए ऋग्वेद में भक्त ने पुकारकर पूछा- हे स्वामिन्! हे सुन्दरतम! विवाह के पश्चात् कन्या के लिए जैसे वर होता है, इस प्रकार है मेरे वरुणदेव! कब आयेगी वह घड़ी जब मैं अपनी आत्मा से तेरे साथ बातें कर सकूँगा? जब तेरे हृदय का प्यार पाकर तेरा अन्तरंग बन सकूँगा? कब वह शुभ घड़ी आयेगी जब मैं सु-मन से तेरे दर्शन पा सकूँगा?

इस मन्त्र में ईश्वर को वरुण कहा गया है। वरुण का अर्थ है वह जिसे हमने सबसे उत्तम, सबसे सुन्दर, सबसे कल्याणकारी समझ के वर लिया हो। ईश्वर को भक्त क्रियात्मक रूप में कहता है कि मैंने तुझे वर लिया है, मैंने अपना वोट तुझको दे दिया है।

इस संसार में एक ओर प्रकृति है, दूसरी ओर ईश्वर। दोनों के मध्य में आत्मा खड़ा है। दोनों में से किसको वह चुनेगा, किसको अपना वोट देगा, यह निर्णय उसे करना है। यदि आप प्रकृति को वरना चाहते हैं तो आर्यसमाज आपको रोकता नहीं, चुन लो प्रकृति को, दे दो उसको अपना वोट। हमारे शास्त्र उसे प्रेय मार्ग कहते हैं। इससे उलट है वह श्रेय जिसमें आत्मा प्रकृति को नहीं अपितु ईश्वर को चुनता है, उसे अपना वोट देकर वर लेता है। प्रकृति मनमोहिनी है, मन को लुभाने वाली है। कितने ही रूप हैं उसके। प्रत्येक पग पर बदलती है, प्रतिक्षण बदलती है, मोहित कर देती है मनुष्य को। परन्तु अन्त में वहाँ विनाश के अतिरिक्त कुछ नहीं। उसका अन्त कड़वा है; आत्मा को इस प्रकार पटकती है कि वह फिर युगों तक सँभल नहीं पाता।

एक दिन भगवान् कृष्ण के पास नारद जी आये; बोले, "भगवन्! मैं ब्रह्मज्ञान की बात पूछने आया हूँ, क्या है यह ब्रह्मज्ञान? क्यों हम ब्रह्म का दर्शन नहीं कर पाते?" श्री कृष्ण ने कहा, "अभी आए हो, थोड़ी देर बैठो, प्रश्न का उत्तर मिल जायेगा।" नारदजी बैठे, विश्राम किया, बोले, "अब दो मेरे प्रश्न का उत्तर।" श्री कृष्ण जी ने कहा, "आओ जंगल में घूमने चलें, वहाँ बातें करेंगे।" दोनों निकल पड़े सैर को। घूमते-घूमते नारद काफी थक गए। प्यास भी सताने लगी। श्री कृष्ण ने मुस्कराते हुए कहा, "नारदजी! आपको शायद प्यास लगी है, मुझे भी लगी है। मैं यहाँ बैठता हूँ, आप कहीं से देखकर थोड़ा पानी ले आइये।" नारद बोले, "आप बैठिये, मैं पानी लेकर अभी आता हूँ।" आगे गए तो एक कुआँ मिला, जिसपर कुछ स्त्रियाँ पानी भर रही थीं। माँगा। एक युवती ने अपने घड़े से पानी पिला दिया। नारद पानी पी रहे थे और उसकी ओर देख रहे थे। देखते-देखते मन में मोह जाग उठा। पानी पी लिया तो एक ओर खड़े हो गए।

वह लड़की घड़े को लेकर अपने घर को चली तो नारद भी उसके पीछे-पीछे चल पड़े। उसके घर में पहुँचे तो लड़की के पिता ने उन्हें पहचानकर कहा, "आप नारद जी! मेरे सौभाग्य से आपके दर्शन हुए।अब भोजन किये बिना जाने न दूँगा।" नारद जी यही तो चाहते थे; बोले, "भूख तो लगी है।" भोजन कर चुके तो बोले, "हम कुछ दिन तुम्हारे घर में रहें तो क्या हो? लड़की के पिता ने कहा, "यह तो मेरा सौभाग्य है।" नारद जी वहीं टिक गए। उस लड़की के रूप का मोह उन्हें पागल किये देता था। मन में जो गिरावट आ गई थी, वह और भी नीचे लिये जाती थी। फिर एक दिन लड़की के पिता से बोले, "मैं चाहता हूँ कि इस कन्या की शादी हो जाये।" लड़की के पिता ने कहा, "महाराज! कन्या तो पराया धन है, मुझे उसका विवाह तो करना ही है। आपसे अच्छा वर उसे कहाँ मिलेगा? मैं विवाह कर दूँगा अवश्य, परन्तु मेरी एक शर्त भी माननी होगी और शर्त यह है कि विवाह के पश्चात् आप मेरे घर पर रहें, कहीं जाएँ नहीं।"

शेष अगले अंक में....

"ईश्वर तू महान् है"

ईश्वर तू महान है, सबका रखता ध्यान है,
तेरा ही एक आसरा, सब सुखों की खान है।

पृथ्वी और आकाश बनाए, नदी और नाले खूब सजाए,
सूरज, चन्दा को चमकाए, जो देते हमको प्राण हैं।
ईश्वर तू महान् है, सबका रखता ध्यान है।

पेड़ और पौधे उगाए तुमने, फल और फूल खिलाए तुमने,
मीठे रसों से सरसाए तुमने, जो देते हमको जीवन दान हैं।
ईश्वर तू महान है, सबका रखता ध्यान है।

जंगल पर्वत बनाए तुमने, जल और वायु बहाए तुमने
चारों वेद रचाए तुमने,जो देते हमको ज्ञान हैं
ईश्वर तू महान् है, सब का रखता ध्यान है।

सच्चे मन से ध्याया तुमको, तन और मन लगाया तुमको
हर वक्त हृदय में पाया तुमको, ''खुशहाल'' बन किया अमृतपान है।
ईश्वर तू महान् है, सब का रखता ध्यान है।

खुशहाल चन्द्रआर्य
180 एम.जी रोड (दूसरी मंजिल)
कोलकाता - 700007

स्वधा से होता प्रशस्त वसुधा का सुधापथ

● देवनारायण भारद्वाज

जिस वेद मन्त्र के छिटक गये कनक कणों से यह शीर्षक बन गया है, क्यों न और कुछ कहने से पहले उस प्रेम-प्रेरणापूर्ण मन्त्र को ही प्रथम अवलोकन कर लिया जाये।

ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा
मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते।
त्वं तान्वेत्थ यदि ते जातवेदः
स्वधया यज्ञं स्वधितिं जुषन्ताम्।।

(अथर्ववेद 18.2.35)

जो अग्नि को जलाकर हवन आदि करके दग्ध या तपे हुए लोग, और जो अग्नि को बिना जलाये हुए ही तप गये लोग, दोनों ज्ञान के प्रकाश के मध्य आत्मत्व धारण शक्ति अर्थात् अपनत्व भाव से परिपूर्ण आनन्द को प्राप्त करते हैं। यदि वे जातवेद संज्ञक सर्वज्ञानी प्रभु या परिज्ञानी पितरजन को आत्मीयता पूर्वक जानते हैं, तो वे वास्तव में अपनत्व भावना से पूर्ण देव पूजा-संगतीकरण एवं दानरूप यज्ञ का ही परिपालन करते हैं।

सायं सायं गृहपतिर्नो अग्निः प्रातः प्रातः सौमनस्यदाता।
प्रातः प्रातः गृहपतिर्नो अग्निः सायं सायं सौमनस्यदाता।

(अथर्व 19.3.3-4)

मन्त्रानुसार प्रमुख रूप से गृहस्थ ही हैं जो नित्य अग्नि होत्र के द्वारा सायं से प्रातः, प्रातः से सायं स्वयं को अग्निदग्ध करते रहते हैं। यज्ञाग्नि के अभ्यास से अपने सौमनस्य अर्थात् आरोग्य, आनन्द और धन की वृद्धि करते हैं। ''अस्मिनयज्ञे स्वधयामदन्तः'' (यजु. 19.58) पितृ यज्ञ के अनुसार हमारे पितृगण अपनत्व की भावना से हर्षित होते हैं, क्योंकि ऐसा करने से गृहस्थ लोग भी सदा प्रसन्न रहते हैं। ''स्वधास्थ तर्पयत मे पितृन्'' (यजु. 2.34) वे ऐसा विनयपूर्ण सम्बोधन करते हैं – हे पितरवृन्द। आप हमारे अमृत तुल्य मधुर पदार्थों से तृप्त हों। वास्तव में ''भवन'' वही है जहाँ 'हवन' होता हो, 'हवन' को ही 'होम' कहते हैं। इसीलिए हमारा होम (Home) और अंगेजी का होम समानार्थक हैं।

स्वधा-आत्मीयता अथवा अपनत्व गृहस्थ धर्म की धुरी है, इससे परिवार ऐश्वर्य एवं शौर्य की ऊँचाई पर पहुँचता है। पर्वत की ऊँचाई पर चढ़ती बालिका ने अपनी पीठ पर अपने छोटे भाई को कपड़े की डोली बनाकर बैठा रक्खा था। किसी यात्री ने चढ़ाई में होने वाले कष्ट की ओर बालिका का ध्यान आकृष्ट कर कह दिया- ''इस बोझ को नीचे उतार क्यों नहीं देती, जिससे तू आसानी से ऊपर चढ़ सकेगी।'' बालिका ने किंचित आक्रोश के साथ उत्तर दिया – ''क्या कहते हो-यह बोझ नहीं मेरा भाई है।'' आजकल मुसलमानों का रमजान का महीना चल रहा है। कुख्यात आतंकी संगठन इस्लामिक स्टेट ने सीरिया में दो युवकों को दिन में खाना खाने के आरोप में फांसी पर लटका दिया, और वहाँ एक पर्चा लगा दिया ''इन्होंने धर्म की चिन्ता किए बिना उपवास तोड़ा है।'' कोई सम्प्रदाय आत्मीयता (अपनत्व) की भावना के बिना धर्म की संज्ञा धारण नहीं कर सकता। इस स्वधा की सुधा का वर्णन जहाँ होगा, कोई भी धर्म सम्प्रदाय क्यों न हो, वहाँ स्वधा-वसुन्धा में उसका यशगान सुनिश्चित है। बात इस्लाम की ही करते हैं। बालिका मरयम आसिफ सिद्दीकी को बाल्यकाल से गीता-पाठ में रुचि थी। माता-पिता ने इसे धर्म विरोधी न मानकर बालिका को अपनत्व की भावना से प्रोत्साहित किया। जून 2015 में सम्पन्न विस्तृत गीता-ज्ञान-प्रतियोगिता में उसको सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हुआ। माता पिता उसको प्रधानमंत्री मोदी से मिलाने को लाये और इस परिवार का दूरदर्शन व समाचार पत्रों के माध्यम से कीर्तिमान विश्व में छा गया। इस आत्मीयता की सम्वेदना क्या होती है, वह सुनामी की आयी भयंकर बाढ़ के एक दृश्य से पता चलता है। भरा-पूरा कुनबा जब डूब गया, तब बचाव दल जीवित रह गये डूबते परिवार के मुखिया को बचाने के लिए दौड़ा। मुखिया बोला मुझे मत बचाओ। मैं अब जीना नहीं चाहता। तुम लोग इस डूब रही अलमारी को बचाकर ले जाओ-यह स्वर्ण आभूषण व रुपयों से भरी है।

इस आत्मीयता का एक और उदाहरण आँखें खोल देने वाला है। तमिलनाडु के एक साधारण परिवार में बेटी का जन्म हुआ। मित्र-पड़ोसी-सम्बन्धी सब बधाई देने पहुँचे। माँ ने बेटी के मुस्कराते चेहरे को देखकर कुछ गौर किया। कुछ ऐसा, जो उसे अन्दर तक झकझोर गया। डाक्टरों ने कहा यह दृष्टिहीन है। माता-पिता अवाक् रह गये, पर कुछ पल के लिए। अगले ही क्षण स्वधा (आत्मीयता) जागृत हो गई, माँ ने बेटी को गले लगाते हुए तय किया कि वह उसके जीवन को प्यार से ऐसे रोशन करेगी, कि वह कभी एहसास ही नहीं करेगी कि वह देख नहीं सकती। पिता रेलवे में नियुक्त, माँ शिक्षित गृहणी। पिता पुस्तकें लाते माँ पढ़कर सुनाती। पुत्री कॉलेज की वाक् प्रतियोगिताओं में प्रथम स्थान पाती।

वह 2013 में बैंक अधिकारी बनी और डूबते ऋण को वसूलकर 'वसूलरानी' कहलाई। वह कहती है कि एक दिन किसी को पड़ोस में पानी बरबाद करते हुए टोक दिया, तो सुनने को मिला 'लो आ गई कलक्टर साहिबा'। यह व्यंग्य भी रंग लाया। यू.पी.एस.सी. परीक्षा के द्वितीय प्रयास में सफल होकर पद्मजा की पुत्री 'बनोजेफाइन' ने इसी वर्ष (2015 में) विदेश मन्त्रालय में अपना सम्मानित पदासन ग्रहण किया है। विदेश विभाग का तात्पर्य है अपने देश से बाहर विश्व के देशों की ओर प्रयाण।

जो लोग यज्ञाग्नि में दग्ध होकर तपकर निखरते हैं, यह उनकी चर्चा हुई। राजा जनक एवं महर्षि याज्ञवल्क्य के संवाद से पता चलता है कि इस भौतिक अग्नि में दग्ध होने से अधिक परिपक्वता है- ''श्रद्धाग्नि सत्यमाज्यमे'' अर्थात् श्रद्धारूपी अग्नि में सत्य व्यवहार की आहुति अर्पित करना। अगला मन्त्र इसी की ओर संकेत करता है:-

शं तप माति तपो अग्ने मा तन्वं तपः।
वनेषु शुष्मो अस्तु ते पृथिव्यामस्तु।।

(अथर्व 18.2.36)

अर्थात्- हे विद्वन्! तू तप तो कर किन्तु आग लगाने के लिए नहीं अपितु शान्ति स्थापन के लिए तप कर। अत्याचार से किसी को सन्तप्त मत कर। तेरा अनुकरणीय बल व तेज पूर्ण सद्व्यवहार सम्पूर्ण पृथ्वी पर व्याप्त हो जाये। यह स्वधाभावना अर्थात् अपनत्व की आत्मीयता से ही संभव होता है। गृहस्थ के लिए यज्ञाग्नि उपासना आवश्यक है, किन्तु गृहत्यागी बिना इस अग्नि के ही आत्मीयता की स्नेह भावना में दग्ध होता रहता है, तपता रहता है और जलता रहता है। उसकी स्वधा अर्थात् निज कुल की आत्मीय-अपनत्व भावना ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' के सुधापथ-अर्थात् अमरता के मार्ग पर अग्रसर हो जाती है। पिता कर्षण जी तिवारी एवं माता यशोदा अमृताबेन की यह आत्मीयता ही थी, जिसने बाल्यकाल से ही मूलशंकर को सद्ग्रन्थज्ञान प्रदान कर चौदह वर्ष की आयु में शिवरात्रि व्रत धारण कर शंकर के दर्शन की ओर प्रेरित कर दिया। मूलशंकर ने दयानन्द सरस्वती बनकर इस अपनत्व को विश्व-व्योम तक विस्तृत कर निरीह भावना के उद्धार हेतु प्रशस्त कर दिया। यह संभव हुआ विरजानन्द के अगाध अपनत्व से जो उस दिन प्रकट हुआ था जब वे शिक्षापूर्ण कर जाने लगे तो गुरुदेव ने अज्ञान अन्धकार को मिटाने के लिये गुरु दक्षिणा में समग्र दयानन्द का ही समर्पण करा लिया था। स्वामी रामतीर्थ अमरीका यात्रा के क्रम में सानफ्रांसिस्को के बन्दरगाह पर आ जाने पर जलयान में एक ओर बैठे थे। साथी यात्री ने कहा आपका सामान कहाँ है, उसे समेटिये। उन्होंने कहा जो कुछ मेरे शरीर पर है, उसके सिवा और कुछ नहीं है मेरे पास। तब तो आपके पास रुपया-पैसा होगा? मैं वह भी नहीं रखता। अच्छा तो अमरीका में आपका कोई सम्पन्न मित्र होगा? स्वामीजी ने उत्तर दिया-हाँ, है क्यों नहीं। मैं केवल एक ही अमरीकन को जानता हूँ – वह हैं आप। यह कहते हुए स्वामीजी ने उनके कन्धे को अपने हाथ से स्पर्श कर दिया। उस यात्री में ऐसी मैत्री भावना जागी, कि वह उनका अनन्य भक्त बन गया और अमेरिका प्रवास की व्यवस्था की।

उपरोक्त मन्त्र के केन्द्र बिन्दु 'स्वधा' का एक और उदाहरण देकर लेख का उपसंहार उचित समझता हूँ। तमिलनाडु के रामेश्वरम् में अखबार आदि की फेरी लगाने वाला गरीब बालक प्रवेश में सफल होकर उच्च प्राविधिक कॉलेज में प्रवेश के लिए आमन्त्रित किया गया था। प्रवेश शुल्क जमा करने की राशि उसके पास नहीं थी, परिवार भी इतना सम्पन्न नहीं था। 'स्वधाभावना' का उदय होता है- कहाँ? उसकी बहिन के हृदय में। वह अपने हाथ के कंगन निकालकर उसकी इस आवश्यकता की पूर्ति करती है। वही विद्यार्थी उत्तीर्ण होकर भारत का मिसाइल मैन बनता है, भारतरत्न बनता है और बनता है भारत का यशवस्वी राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, जिनको विश्व के अनेक देशों ने सम्मानित किया, उनके नाम पर विज्ञान दिवस मनाये, और उन्हें उच्च से उच्चतर उपाधियाँ दीं, और विश्वभर में उनके जन्म दिवस 15 अक्टूबर को माननीय विज्ञानरत्न श्री लक्ष्मण प्रसाद ने नवाचार दिवस के रूप में स्थापित कर उन्हें सुधापथ का पथिक घोषित कर दिया है और चरितार्थ हो उठा मृत्यु से ऊपर उठकर अमरता का लक्ष्य- ''मृत्योर्मामृतमगमयेति।''

'वरेण्यम्', अवन्तिका (प्रथम)
राजघाट रोड, अलीगढ़ – 202001 (उ.प्र.)

आर्य वधु चाहिए

आस्ट्रेलिया में कार्यरत इंजीनियर, आयु 26 वर्ष, कद 6 फुट, एम. टेक, एम.बी.ए. भारत में बसने के इच्छुक एक आर्य-परिवार के सुन्दर युवक के लिए आर्य-परिवार की सुन्दर, सुशिक्षित, संस्कारी कन्या की आवश्यकता है।

संपर्क करें : 9992000444

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

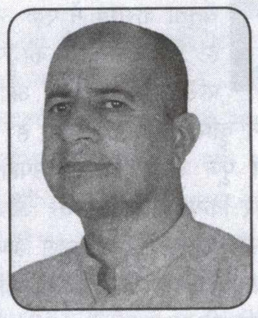

शंका–हमारा ज्ञान सत्य है, या नहीं। यह जानने के लिए अपने ज्ञान की तुलना किसके ज्ञान के साथ करनी चाहिये?

समाधान– हम कोई बात समझ रहे हैं। वो ठीक समझ रहे हैं, या गलत समझ रहे हैं, इसका निर्णय करने के लिए **अपने ज्ञान की तुलना वेद के साथ करनी चाहिये। अथवा अन्य प्रमाणों के साथ करनी चाहिये।** प्रत्यक्ष प्रमाण, अनुमान प्रमाण आदि–आदि प्रमाणों से तुलना करनी चाहिये, कि मैं तो यह समझ रहा हूँ, और इस बारे में शब्द प्रमाण क्या कह रहा है, वेद क्या कह रहा है, ऋषि लोग क्या कह रहे हैं। यदि वे भी वही कुछ कह रहे हैं, जो मैं समझ रहा हूँ, तो मेरा ज्ञान ठीक है। और वेद कुछ और कह रहा है, और मैं कुछ और समझ रहा हूँ, तो इसका मतलब गड़बड़ है। गड़बड़ कहाँ है, मुझमें या वेद में? मुझमें गड़बड़ है, वेद झूठा नहीं है। हमारे समझने में भूल हो सकती है, ईश्वर के कहने में भूल नहीं है। इस प्रकार अपने ज्ञान का निर्णय करने के लिये वेद से तुलना करो, ऋषियों के ग्रंथों से तुलना करो तो पता चल जायेगा कि हम ठीक ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं अथवा हम गड़बड़ (भ्रान्ति) में हैं।

शंका– जहाँ अपना अनुभव काम नहीं कर पा रहा हो, स्थिति डावाँडोल हो रही हो, तब योगाभ्यासी किसके आधार पर दृढ़ होता है?

समाधान– तो इसका उत्तर यही है, कि अपने से जो अधिक अनुभवी लोग हैं, अपने से जो अधिक योग्य हैं, प्राचीन काल के ऋषि मुनि हैं और वेद हैं, उन ग्रंथों को देखना चाहिये। **महान् पुरुषों को देखना चाहिये, कि वे लोग ऐसी परिस्थिति में क्या करते थे। शास्त्र क्या बोलते हैं, कि जब हमारी स्थिति खराब हो रही हो, तब ऐसी परिस्थिति में हमें क्या करना चाहिये।** उन प्राचीन ऋषि मुनियों के जीवन वृतान्त से, उनके इतिहास से, उनकी दिनचर्या से, उनकी शैली से हमें पता चल जायेगा, कि क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिये।

शंका– योगाभ्यास को कष्ट न समझकर करें, तो क्या उसमें सफलता मिल सकती है?

समाधान– बिल्कुल मिल सकती है। योगाभ्यास को कष्ट मानकर के मत कीजिये, तपस्या मानकर के कीजिये, तो आपको सफलता मिलेगी। कष्ट मानकर करेंगे, तो सफलता नहीं मिलेगी। **आप योगाभ्यास को कष्ट मानकर करेंगे, तो मन में खिन्नता हो जायेगी, मन चंचल हो जायेगा, अस्थिर हो जायेगा, तो सफलता नहीं मिलेगी।** तपस्या मानकर करेंगे तो मन में प्रसन्नता होगी, शांति और स्थिरता होगी और आप योगाभ्यास में सफल हो जायेंगे।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

प्रेरणादायी प्रसंग, कुछ अपने कुछ ऋषि के तीन गुरु एक शिष्य

● डॉ. भवानीलाल भारतीय

आप जानते हैं मूलशंकर को संन्यास की दीक्षा देने वाले कौन थे? जब युवा मूलशंकर नर्मदा नदी के तटवर्ती क्षेत्र चाणोद, करनाली की ओर घूम रहे थे और किसी गुरु की तलाश में थे जो उन्हें चतुर्थ आश्रम की दीक्षा दे सके, तो उनकी भेंट यहां एक महाराष्ट्रीय संन्यासी पूर्णानन्द सरस्वती से हुई। बहुत आग्रह करने पर इन संन्यासी ने मूलशंकर को संन्यास की दीक्षा दी। दण्ड देकर सरस्वती (दण्डियों का एक भेद) बनाया और दयानन्द सरस्वती नूतन नाम दिया। दयानन्द ने योग सीखने के लिए एक योगी युगल (स्वामी शिवानन्द गिरि और स्वामी ज्वालानन्द पुरी) का शिष्यत्व प्राप्त किया। कुछ समय तक आबू पर्वत के उत्तुंग शिखर पर निवास करने वाले स्वामी भवानी गिरि से भी पातञ्जल योग का अभ्यास किया।

अन्ततः विद्या की तलाश में वे मथुरा स्थित दण्डी विरजानन्द की पाठशाला में आये और इस प्रज्ञाचक्षु महान वैयाकरण संन्यासी से सम्पूर्ण व्याकरण, दर्शन आदि पढ़ कर अद्वितीय शिष्यत्व प्राप्त किया। स्वग्रंथों के अन्त में उन्होंने अपने विद्यागुरु दण्डी जी के प्रति सादर कृतज्ञता स्वीकार करते हैं। दीक्षा गुरु तथा योग गुरुओं का नामोल्लेख आत्मकथा में आदरपूर्वक किया है। योग गुरुओं के बारे में तो एक ही पंक्ति लिख कर समग्र श्रद्धा व्यक्त कर दी। इन गुरुओं ने योग के रहस्य सिखलाकर मुझे निहाल कर दिया।

दयानन्द के अहैतुक हितैषी–ज्योतिषी, कोतवाल, डॉक्टर

जब स्वामी दयानन्द अध्ययनार्थ मथुरा आये तो सबसे बड़ी समस्या निवास तथा भोजन की थी। निवास की व्यवस्था तो यथातथा हो गई और लक्ष्मीनारायण मंदिर की एक कोठरी उन्हें मिल गई। भोजन के लिए पता हुआ तो निश्चय रहा कि स्वामी घाट पर जोशी बाबा (नाम अमरलाल औदीच्य ब्राह्मण) की हवेली है जहाँ प्रतिदिन पचासों छात्र, संन्यासी, विरक्तादि भोजन करते हैं। जोशी बाबा ने अत्यन्त आदर के साथ स्वामीजी को ढाई–तीन वर्ष तक अपने घर भोजन कराया। उस विद्या पिपासु स्थानीय, जनों को अपरिचित साधु को भोजन कराने वाले जोशी अमरलाल ऋषि दयानन्द के अहैतुक हितैषियों में था।

जिस समय काशी शास्त्रार्थ में दयानन्द को मूर्तिपूजा के समर्थक पाखण्डरत स्वार्थी, उद्दण्ड लोगों ने अमेठी राजा के बाग में घेर कर उन पर ईंट पत्थरआदि की वर्षा आरंभ की। उस समय पुलिस कोतवाल रघुनाथ प्रसाद ने महाराज को अपनी रक्षा में लेकर उस महापुरुष की प्राण रक्षा की। वह नहीं करता तो महती हानि हो जाती।

अस्वस्थ दशा में स्वामी जी पालकी में आबू पर्वत पर चिकित्सा के लिए ले जाये जा रहे थे। उधर से डॉ. लक्ष्मण दास आ रहा था। जब डॉक्टर को पता चला कि महाराज को चिकित्सा के लिए पार्वत्य अस्पताल में ले जाया जा रहा है तो वह स्वयं अपने संरक्षण में अजमेर ले आया तथा जीवनकाल तक चिकित्सा की ऐसे सेवा भाव वाले डॉक्टर कहां मिलेंगे।

वह तो मेरा वरिष्ठ (Senior) सहपाठी है

विद्याध्ययन समाप्त कर स्वामी दयानन्द आर्ष पद्धति से संस्कृत विद्या के प्राचारार्थ संस्कृत पाठशालाएं स्थापित करने में प्रवृत्त हुए। सर्वप्रथम फर्रुखाबाद में पाठशाला स्थापित की और मथुरा में दण्डी जी की पाठशाला में कालक्रम से अपने से वरिष्ठ पं. उदयप्रकाश को अध्यापक बनाया। उदयप्रकाश की प्रवृत्ति पौराणिक, अनार्ष संस्कारों एवं विचारों से परिपूर्ण थी। अतः वह शाला के छात्रों को उल्टी सीख देता। कहता, यह नंगा, सण्डामुसण्डा दयानन्द को तो कुछ चाहिए नहीं। यदि इसकी सीख पर चलोगे तो पुजारी की वृत्ति कहां से मिलेगी? श्राद्धादि के मधुर मिष्ठान खाने से वंचित रहोगे आदि आदि। एक प्रबुद्ध छात्र ने स्वामी जी को पं. उदयप्रकाश की इस करतूत को पत्र द्वारा सूचित कर दिया कि ये पण्डित जी किस प्रकार पौराणिक संस्कारों का छात्रों में बीजारोपण कर रहे हैं। और आपको नंगा (मात्र लंगोटी) भिखमंगा कहते हैं। स्वामीजी ने उत्तर में लिखा, भाई जो मुझे नंगा, भिखमंगा आदि कहता है, इसका तो मैं बुरा नहीं मानता। अन्ततः पाठशाला में मुझ से वरिष्ठ (कालक्रम से) था। परन्तु छात्रों में जो पौराणिक कुसंस्कारों की जड़ जमाता है, इसे मैं अनुचित मानता हूँ। यह थी महाराज की सहनशीलता। वे व्यक्तिगत मानपमान की चिंता न कर सामाजिक, व्यापक हित की बात सोचते थे।

एक आर्य वकील ऐसे भी – श्री च्यवन आर्य जोधपुर

(डॉ. भवानीलाल भारतीय के अनुभव) बात 1956–57 की है। मैं नागौर जिले के ग्राम छोटी खाटू में सीनियर टीचर नियुक्ति हुआ था। पता लगा कि यहां अच्छा आर्य समाज मंदिर बना हुआ है लेकिन उस पर एक महिला ने कब्जा कर रखा है जो स्वयं को उसका वैध मंत्री मानती है। यह कैसे संभव हो सकता है कि एक आर्य समाजी टीचर गांव में आये वहां आर्य समाज की गतिविधियां आरंभ न हों। मैंने अपनी सहयोगी मित्रों के साथ समाज का काम पुनः आरंभ किया। गांव के विद्वेषी प्रकृति के लोगों को अध्यापाकों का सक्रिय होना पसन्द नहीं आया तो उन्होंने बाहर से आर्यों को धमकाना शुरू किया और हानि पहुंचाने की धमकी दी। मेरा ही सब दायित्व था। मैंने पत्र द्वारा जोधपुर के आर्य वकील च्यवन आर्य को सूचित किया। देखता क्या हूँ कि एक सवेरे वे लोकर ट्रेन से मेरे गांव में आये और मेरे निवास पर पहुंच गये। मेरा हैरान होना स्वाभाविक था। उन्होंने पहले तो

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

पुरुषार्थ करो, निर्धनता भगाओ–अथर्ववेद

● शिवनारायण उपाध्याय

निर्धनता वास्तव में एक अभिशाप है! निर्धन मनुष्य को परिवार, परिजन, समाज आदि के द्वारा हीन दृष्टि से देखा जाता है। उसकी बुद्धिमत्ता पूर्ण बातों को भी उपहासपूर्वक अस्वीकार किया जाता है। घर और बाहर सभी जगह बात–बात पर उसे अपमानित किया जाता है। निर्धनता के कारण व्यक्ति की ऐसी जो स्थिति बन जाती है उसे अथर्ववेद में इस प्रकार वर्णन किया गया है:–

निः सालां घृष्णुं धिषणमेकवाद्यां जिघत्स्वम्।
सर्वाश्चण्डस्य नप्त्यो नाशयामः सदान्वाः।
अथर्व. 2.14.1

अर्थ–(निःसालाम्) बिना घर वाली (धृष्णुम्) भयानक रूप वाली (एक वाद्याम्) दीनता का एक वचन बोलने वाली (धिषणम्) उत्तम वाणी को (जिघत्स्वम्) खा लेने वाली (चण्डस्य) क्रोध की (सर्वाः) इन सब (नप्त्यः) सन्तानों (सदान्वाः) सदा चिल्लाने वाली यद्वा दानवों, दुष्कर्मियों के साथ रहने वाली निर्धनता की पीड़ाओं को (नाशयामः) हम नष्ट कर दें।

भावार्थ–निर्धनता के कारण मनुष्य को घर छोड़कर बाहर दूर देश में चला जाना पड़ता है। वह कुरूप हो जाता है। सदैव दीनवाणी में बात करता है, उसकी बुद्धि ठीक से काम नहीं कर पाती है। निर्धनता के कारण उसमें काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दुर्गुण उत्पन्न हो जाते हैं। अच्छे लोग उसके साथ रहना पसन्द नहीं करते हैं। निर्धनता जनित यह स्थिति दूरदर्शी और पुरुषार्थी बन कर धनार्जन करने पर ही बदल सकती है।

ऋग्वेद में भी निर्धनता का वर्णन इसी प्रकार हुआ है–

अरायि काणे विकटे गिरिं गच्छ सदान्वे।
शिरिम्बिठस्य सत्वभिस्तेभिष्ट्वा चातयामसि।
ऋ. 10.155.1

अर्थ– (अरायि) हे अदानशील! (काणे) हे कानी। (विकटे) हे लंगड़ी। (सदान्वे) सदा चिल्लाने वाली। (गिरिम्) पहाड़ पर (गच्छ) चली जा। (शिरिम्बिठस्य) मेघ के (तेभि) उन (सत्वभि) जलों से (त्वा) तुझे (चातयामसि) हम नष्ट कर देते हैं।

भावार्थ–इस मंत्र में निर्धनता द्वारा उत्पन्न दुर्गुणों का वर्णन किया गया है। निर्धनता के कारण मनुष्य अदानशील स्थिति को एक ही प्रकार से आंकलन करने वाला, प्रगति के पथ पर लंगड़ा कर चलने वाला बन जाता है। इस स्थिति को कृषि कर्म में पुरुषार्थ करके बदला जा सकता है।

निर्धनता से छुटकारा पाने का सबसे अच्छा ढंग यह है कि मनुष्य पुरुषार्थी बन धनार्जन करे तथा उसमें से कुछ धन व्यय न करके भविष्य के लिए बचाकर अलग रख दे। अथर्ववेद की सलाह है–

निर्वो गोष्ठाद जामसि निरक्षान्निरुपानसात्।
निर्वो मगुन्द्या दुहितरो गृहेभ्यश्चातयामहे।
अथर्व. 2.14.2

अर्थ– (वः) तुमको (गोष्ठात्) अपनी गोशाला से या वाचनालय से (निर्+अजामसि) हम निकाल देते हैं, (अक्षात्) व्यवहार से (निर्) निकाले (उपानसात्) अन्नगृह अथवा धान्य की गाड़ी से (निर्) निकाल देते हैं। (मगुन्द्याः) हे ज्ञान की मिथ्या करने वाली (कुवासना) अथवा निर्धनता की (दुहितरः) पुत्रियों (पुत्री समान उत्पन्न पीड़ाओं) (वः) तुमको (गृहेभ्यः) अपने घरों से (निर्) निकालकर (चातयामहे) हम नष्ट कर देते हैं।

भावार्थ– मनुष्य पुरुषार्थ कर अध्ययन द्वारा अपना ज्ञान बढ़ावे, पशुओं की उचित देखभाल कर संख्या में वृद्धि करे। कृषि पर ध्यान देकर अन्न की पैदावार बढ़ावे। आय से व्यय कम करके धन संग्रह कर निर्धनता को भगा दे। यदि धन को थोड़ी थोड़ी मात्रा में बचाया जाये तो कालान्तर में वह उसी तरह बहुत हो जाता है जैसे बूंद–बूंद पानी से भी घड़ा भर जाया करता है।

ये सर्पिषः संस्रवन्ति क्षीरस्य चोदकस्य च।
तेभिर्मे सर्वेः संस्रावैर्धनं सं स्रावयामसि। अथर्व. 1.15.4

भावार्थ–जैसे घी, दूध जल की बूंद बूंद मिलकर धारें बन जाती हैं और सब पर उपकारी होती हैं उसी प्रकार हम लोग उद्यम करके थोड़ा थोड़ा धन या ज्ञान संचय करके पर्याप्त मात्रा में धन और ज्ञान का संग्रह कर सकते हैं। शासकों को भी ऐसी आर्थिक नीति काम में लेनी चाहिए जिससे गरीब लोगों के पास भी धन पहुंचे और राष्ट्र से निर्धनता दूर हटे।

निर्लक्ष्म्यं ललाम्यं निरराति सुवामसि।
अथ या भद्रा तानि नः प्रजाया अरातिं न्यामसि।
अथर्व. 1.18.1

अर्थ– (ललाम्यम्) धर्म से रुचि हटाने वाली (निर्लक्ष्यम्) निर्धनता और (अरातिम्) शत्रुओं को (निःसुवामसि) हम निकाल देवें। (अथ) और (या) जो (भद्रा) मंगल है (तानि) उनको (नः) अपनी (प्रजायै) प्रजा के लिए (अरातिम्) सुख न देने वाले शत्रु से (नयामयि) हम लावें।

भावार्थ– शासक अपनी और प्रजा की निर्धनता दूर करने वाली आर्थिक नीति अपनावे तथा उसमें बाधा उत्पन्न करने वालों को शत्रु मानकर दण्ड दें।

निर्धनता दूर करने में गृह पत्नी का भी बड़ा भारी योगदान होता है। वह गृह पर आवश्यक मदों पर कम से कम व्यय करके प्राप्त आय में से कुछ धन लगातार बचाकर रखती है जो उचित अवसर पर काम आता है।

भगस्य नावमा रोह पूर्णामनु पदस्वतीम्।
तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः।
अथर्व. 2.36.5

इस मंत्र में गृहपत्नी की भारी उत्तर दातृता का वर्णन है। जैसे नाविक खान पान आदि आवश्यक सामग्री से लदी लदायी ओर बड़ी दृढ़ नौका से जल यात्रियों को समुद्र से पार लगाता है वैसे ही गृहपत्नी अपने घर को धन धान्य आदि से भरकर रखे और अपने पति को भी नियम में बांधकर प्रेम से प्रसन्न रखकर गृहस्थाश्रम को उचित ढंग से चलावे।

निर्धनता को हटाने के लिए प्रबल पुरुषार्थ और ज्ञान की आवश्यकता होती है। पुरुषार्थ करने के लिए कई क्षेत्र हैं। व्यक्ति को उनमें से कोई भी एक अथवा दो क्षेत्र चुनकर पूरे मनोयोग से उनमें कार्य करना चाहिये। भारत में कृषि क्षेत्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। मन लगाकर कृषि करने से कृषि की उपज बढ़ जाती है।

सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव
यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भवः।
अथर्व. 3.17.8

अर्थ– (सीते) हे जुती हुई धरती। (त्वा) तेरी (वन्दामहे) हम वन्दना करते हैं। (सुभगे) हे सौभाग्यवती। (अर्वाची) हमारे सम्मुख (भुवः) रह। (यथा) जिससे (नः) हमारे लिए (सुफला) सुन्दर (फल) वाली (भुवः) होवे।

भावार्थ– मनुष्य खेती को मन लगाकर करे तथा सावधानीपूर्वक उसकी चौकसी करता रहे जिससे अन्नवान् व धनवान होकर सदैव आनन्द में रहे।

घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
सा नः सीते पयसाभ्याववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत् पिन्वमानाः। अथर्व. 3.17.9

भावार्थ– चतुर किसान युक्ति से बीज में वा धरती में घी और मधु आदि मिलकार धान्य आदि को पुष्ट और मधुर बनावें जैसे क्रिया विशेष से माली लोग आम, दाख, फूल आदि को उत्तम बनाते हैं।

मनुष्य पशुपालन के द्वारा भी निर्धनता पर विजय पा सकता है।

शिवो वो गोष्ठो भवतु शारिशाकेव पुष्यत।
इहैवोत प्र जायध्वंमया वः संसृजामसि। अथर्व. 3.14.5

भावार्थ–जैसे शारिशाका अर्थात् चावल की शाखा थोड़े प्रयत्न से ही साठ दिन अर्थात् दो महीने में ही पक जाती है वैसे ही प्रयत्न पूर्वक थोड़े परिश्रम से पालन करके गायों से दूध, घी और खेती के लिए बैल आदि प्राप्त कर बहुत लाभ उठाया जा सकता है। छोटे छोटे व्यापार के द्वारा भी धन कमाया जा सकता है। यदि व्यापार में कुशल व्यापारी से सलाह लेकर कार्य करें तो अल्प समय में ही निर्धनता से मुक्ति मिल सकती है।

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः।
तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्ने सातघ्नो देवान् हविषा निषेध। अथर्व. 3.15.5

अर्थ– (देवाः) हे व्यवहार कुशल व्यापारियो (धनेन) मूलधन से (धनम्) धन (इच्छमानः) चाहने वाला मैं (येन धनेन) जिस धन से (प्रपणम्) व्यापार (चरामि) चलाता हूँ, (तत्) वह धन (मे) मेरे लिए (भूयः) अधिक से अधिक (भवतु) होवे, (कनीय) थोड़ा (मा) न होवे। (अग्ने) हे तेजस्वी विद्वान्। (सातघ्नः) लाभ नाश करने वाले (देवान्) मूर्खों को (हविषा) हमारी भक्ति द्वारा (निषेध) रोक दीजिए।

ज्ञान प्राप्त करके भी पुरुषार्थ करके निर्धनता को दूर कर सकते हैं।

अग्ने अच्छ वदेह नः प्रत्यङ् नः सुमना भव।
प्र णो यच्छ विशां पते धनदा असि नस्त्वम्।
अथर्व. 3.20.2

अर्थ– (अग्ने) हे तेजस्वी विद्वान्। (अच्छा) अच्छे प्रकार से (इह) यहां पर (नः) हमसे (वद) बोल। (प्रत्यङ्) प्रत्यक्ष होकर (नः) हमारे लिए (सुमनाः) प्रसन्न मन (भव) हो। (विशाम् पते) हे प्रजाओं के रक्षक। (नः) हमें (प्रयच्छ) दान दे, (त्वम्) तू (नः) हमारा (धनदाः) धन का देने वाला (असि) है।

भावार्थ– मनुष्य विद्वानों से विद्या प्राप्त कर संसार में ऐश्वर्य प्राप्त करें।

प्र णो यच्छत्वर्यमा प्र भगः प्र बृहस्पतिः।
प्र देवीः प्रोत सूनृता रयिं देवी दधातु मे। अथर्व. 3.20.3

अर्थ– (अर्यमा) वैरियों का नियन्ता वीर पुरुष, (प्र) अच्छे प्रकार (भगः) ऐश्वर्यवान् धनी पुरुष (प्र) अच्छे प्रकार और (बृहस्पतिः) बड़ी बड़ी विधाओं को स्वामी, प्रधान आचार्य (प्र) अच्छे प्रकार (नः) हमें (देवीः) दिव्य शक्तियां (प्र यच्छत्) प्रदान करें। (उत) और (सूनृता) प्रिय सत्यवाणी (देवी) देवी (मे) मुझे (रयिम्) धन (प्र) अच्छे प्रकार (दधातु) देवे।

शिल्प विद्या द्वारा भी धनार्जन किया जा सकता है।

मयिं देवा द्रविणमा यजन्तां मय्याशीरस्तु मयि देवाहुतिः।
दैवा होतारः सनिषन् न एतदरिष्टः स्याम तन्वा सुवीराः। अथर्व. 5.3.5

भावार्थ– मनुष्य प्रयत्नपूर्वक शिल्प आदि उत्तम कार्यों से धन एकत्र करके विद्वानों में बुलाया जाकर सत्कार प्राप्त करे; शरीर से स्वस्थ रह कर अपनी सन्तान को उत्तम बनावे।

इसी प्रकार अथर्ववेद काण्ड 3 सूक्त 24 मंत्र 3 व 4 में कहा गया है कि मनुष्य कृषि, व्यापार आदि द्वारा चारों दिशाओं और ऊपर नीचे की दिशा से बहुत धन प्राप्त करें और फिर अनेक प्रयोगों द्वारा उनकी यथावत् वृद्धि करता रहे। इसी से निर्धनता हटती है।

शतहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किर।
कृतस्य कार्यस्य चेह स्फातिं समावह। अथर्व. 3.24.5

भावार्थ–मनुष्य सैकड़ों तथा सहस्त्रों प्रकार से कर्म कुशल होकर और सहस्त्रों कर्म कुशलों से मिलकर धन धान्य एकत्र करे और उत्तम कर्मों में व्यय करके आगा पीछा सोचकर सदैव उन्नति करता रहे। अथर्ववेद काण्ड 5 सूक्त 7 मंत्र 1 में कहा गया है कि जो मनुष्य विपत्ति में निर्भय होकर धैर्य से उपाय करते हैं वे उन्नति करते हैं। इसी प्रकार अथर्ववेद काण्ड 5 सूक्त मंत्र 7 में कहा गया है कि मनुष्य निर्धनता को प्रयत्न पूर्वक हटावे। फिर इसी सूक्त के 10वें मंत्र में कहा गया है कि जो मनुष्य विपत्तियों को शान्ति से सहन कर लेते हैं वे अन्त में धनी, बली और सुखी होते हैं। हमने अथर्ववेद के कुछ थोड़े से मंत्रों का अध्ययन करके देख लिया है कि निर्धनता को हटाया जा सकता है। इति।

73, शास्त्री नगर दादाबाड़ी
कोटा (राजस्थान) 324009

ऋषि वेदों के रचयिता नहीं थे

● वेद प्रकाश शास्त्री

लेखक को 'हिन्दू सभा वार्ता' 19 नवम्बर से 24 नवम्बर, 2014 का अंक पढ़ने को मिला। इस अंक में ''सप्त ऋषि'' मुख्य शीर्षक के अन्तर्गत बॉक्स में "वेदों के रचयिता ऋषि" उपशीर्षक बनाया गया। इसके अन्तर्गत लिखा गया—

"ऋग्वेद में लगभग एक हजार सूक्त हैं, लगभग दस हजार मन्त्र हैं। चारों वेदों में करीब बीस हजार हैं और इन मन्त्रों के रचयिता कवियों को हम ऋषि कहते हैं। बाकी तीन वेदों के मन्त्रों की तरह ऋग्वेद के मन्त्रों की रचना में भी अनेकानेक ऋषियों का योगदान रहा है।"

इस लेख के लेखक का नाम यहां प्रकाशित नहीं किया गया। लेख के साथ ही लेखक का नाम होता तो क्या ही अच्छा होता। यदि लेख कहीं से उद्धृत किया जाता है तो साभार लिख कर पुस्तक/पत्रिका का नाम पृष्ठादि दिया जाना चाहिए जिससे उसके बारे में ज्ञात हो सके।

ऐसा प्रतीत हो रहा है कि लेखक पाश्चात्य विद्वानों से प्रभावित है अथवा उस भारतीय लेखक से, जिसने भारतीय संस्कृति, वैदिक मान्यताओं को कुत्सित करने का प्रयास किया है।

वस्तुतः वैदिक परम्परा के अनुसार ऋषि वेदमंत्रों के रचयिता नहीं हैं अपितु अर्थों के साक्षात्कर्ता हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान है, जिसे परमात्मा ने सृष्टि के आदि में अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा ऋषियों को क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के रूप में दिया था। उन चारों ऋषियों ने 'ब्रह्मा' को वेदज्ञान दिया। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने आगे उपदेश दिया। यथा—

यस्माद् ऋचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्।
सामानि यस्य लोमानि अथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः।।

अथर्व. 10/7/20

जिस परमात्मा से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद प्रकाशित हुए हैं, वह कौन सा देव है? जो सबको उत्पन्न करके धारण कर रहा है, वह परमात्मा है।

तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत।।
यजु. 31/7

उस सच्चिदानन्द, सर्वव्यापक, उपासनीय, सर्वसामर्थ्ययुक्त परमात्मा से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद उत्पन्न हुए हैं।

एवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद् यद् ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरसः।।
शत. कां. 14 अ. 4 कं. 10

महाविद्वान् महर्षि याज्ञवल्क्य मैत्रेयी से कहते हैं—

हे मैत्रेयी! जो आकाशादि से बड़ा सर्वव्यापक परमेश्वर है, उससे ही ऋग्, यजु, साम और अथर्व—ये चारों वेद उत्पन्न हुए हैं। जैसे मनुष्य के शरीर से श्वास बाहर आ के फिर भीतर को जाता है, इसी प्रकार सृष्टि के आदि में ईश्वर वेदों को उत्पन्न करके संसार में प्रकाश करता है।

ऋग्वेदादि भा.भू., वेदात्पत्ति विषय

मनु महाराज ने भी इसी मान्यता को स्वीकार किया है—

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थं ऋग्यजुः सामलक्षणम्।।

मनु. 1/23

विश्वयज्ञ के संचालन के लिए सनातन ऋग्, यजु, साम और अथर्व को अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा देवर्षियों द्वारा प्रकाशित किया और उन देवर्षियों ने ब्रह्म को प्राप्त कराए।

सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेद शब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे।।
मनु. 1/21

उस परमात्मा ने वेद शब्द से—पूर्व सृष्टि के समान सबके अलग—अलग नाम और काम निश्चित किए तथा पृथक् पृथक् संस्था (विभाग) बनाए।

उल्लिखित प्रमाणों से पूर्णतः स्पष्ट है कि लेखक ने जिन ऋषियों का वेदमन्त्रों के रचयिता के रूप में वर्णन किया है, वे उत्तरवर्ती हैं। वेद उनसे पूर्व विद्यमान थे। अतः वे रचयिता के रूप में नहीं हो सकते।

वस्तुतः वेद मनुष्यकृत नहीं हैं, अपितु ईश्वरीय ज्ञान हैं। ऋषियों ने वेदमन्त्रों का साक्षात्कार किया था, अर्थज्ञान में विशेषज्ञता प्राप्त की थी। इसीलिए उनका उल्लेख उस सूक्त के आदि में किया गया है। महर्षि दयानन्द लिखते हैं—

ऋषयो मन्त्रदृष्टयः मन्त्रान् सम्प्रादुः। निरुक्त.

"जिस—जिस मन्त्रार्थ का दर्शन जिस—जिस ऋषि को हुआ और प्रथम ही, जिसके पहले उस मन्त्र का अर्थ किसी ने प्रकाशित नहीं किया था, किया और दूसरों को पढ़ाया भी, इसलिए उस—उस मन्त्र के साथ ऋषि का नाम स्मरणार्थ लिखा लिखाया जाता है। **जो कोई ऋषियों को मन्त्रकर्ता बतलावे, उसको मिथ्यावादी समझो। वे तो मन्त्रों के अर्थ प्रकाशक हैं।"**

सत्यार्थप्रकाश समु. 7

वेद में लौकिक इतिहास नहीं है। इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द कहते हैं—

प्रश्न—जैसे ऐतरेय आदि ब्राह्मण ग्रन्थों में याज्ञवल्क्य, मैत्रेयी, गार्गी, जनक आदि के इतिहास लिखे हैं, वैसे ही **''त्र्यायुषं जमदग्नेः ....।।''** यजु. 3/62 इत्यादि वेदों में पाये जाते हैं।

उत्तर—ऐसा भ्रम मत करो। क्योंकि जमदग्नि और कश्यप ये नाम यहाँ देहधारी मनुष्यों के नहीं हैं। इसका प्रमाण शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि—'चक्षु का नाम जमदग्नि और प्राण का नाम कश्यप है।'

चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषिः।। शतपथ 8/1/2/3

ऋग्वेदादि भा.भू., वेदसंज्ञाविचार

अतः विभिन्न ऋषियों के नामों को देखकर लेखक ने वेदों में इतिहास की जो कल्पना की है, वह कपोलकल्पित ही है, यथार्थ नहीं। इतिहास तो बाद में लिखा जाता है, घटना पहले हो चुकी होती है। ऐसा वेदों में नहीं है। उसके शब्द यौगिक हैं, लौकिक नहीं। वेदों में किसी की भी जीवनकथा नहीं है।

ब्रह्मा द्वारा वेदों को रचना, व्यास द्वारा संहिताओं को संग्रह किया जाना सदृश बातें करना भी मिथ्या है। एक बात और, वेदों से शब्द ग्रहण करके बाद में व्यक्तियों का नामकरण किया गया। यथामति अन्य जीवों, पदार्थों के नाम रखे गए।

इसी प्रकार सप्त ऋषि मण्डल के नक्षत्रों का नामकरण है, जो सात ऋषियों के नाम पर हुआ है। ये ऋषि ज्ञान, कर्म, उपासना, त्याग, तपस्या आदि गुणों में इतने श्रेष्ठतम हो गए कि उनके बाद उनकी स्मृति चिरस्थायी रखने के लिए सप्त नक्षत्रों का नामकरण उनके नाम पर कर दिया गया।

वर्तमान समय में जनपद—बाराबंकी, उ. प्र. में एक उपनगर है, जिसका नाम ''सतरिख'' है जो सप्तऋषि का तद्भव रूप है। इसके किनारे नदी भी बहती है। ऐसा प्रसिद्ध है कि वे सप्तर्षि यहीं पर तपस्या करते थे।

लेखक ने सप्तर्षियों का तो वर्णन किया परन्तु 'ध्रुव' तारे की ओर उसका ध्यान नहीं गया। जिसका सप्तर्षि मण्डल के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। कहा जाता है कि भक्त ध्रुव अपनी तपस्या में स्थिर रहा, विचलित नहीं हुआ। अतएव इस नक्षत्र का नाम 'ध्रुव' पड़ गया।

विवाह संस्कार में वर, वधू से कहता है—

वर— ध्रुवं पश्य।। गोभिल गृ. सू. 2/3/9—11
हे देवी! इस ध्रुव तारे को देखो।
वधू— पश्यामि।। मैं ध्रुव तारे को देखती हूँ।
वर— अरुन्धती पश्य।। हे देवी! तुम इस अरुन्धती तारे को देखो।
वधू— पश्यामि।। मैं अरुन्धती तारे को देखती हूँ।
ध्रुवमसि ध्रुवन्त्या पश्यामि.....।।
पारस्कर गृ. सू. 1/8/19

हे वर! जैसे आप ध्रुव तारे की भांति स्थिर हैं, वैसे ही मैं भी स्थिर हूँ।

सप्तर्षि मण्डल में चार तारे चारपाई के पाए की तरह आगे और तीन तारे कुछ तिरछी पंक्ति में पीछे होते हैं। इनमें से बीच वाले तारे का नाम ''वशिष्ठ'' है, वशिष्ठ तारे के साथ ही कुछ कम चमकता हुआ तारा ''अरुन्धती'' है। अरुन्धती वशिष्ठ तारे के साथ ही गति करता है। अरुन्धती महर्षि की पत्नी का नाम था। जहां महर्षि वशिष्ठ ने सप्त ऋषियों में स्थान प्राप्त कर लिया, वहां अरुन्धती ने भी अपने तपोबल से वशिष्ठ की सहचरी के रूप में सप्तर्षि मण्डल में अपना स्थान बना लिया।

इसीलिए जैसे वशिष्ठ तारे के साथ ही अरुन्धती तारा स्थित रहते हुए गति करता है, वैसे ही तुम भी मेरे साथ गृहस्थ आश्रम में स्थित रहते हुए जीवन व्यतीत करो।

सप्तर्षि मण्डल के चार तारों के अगले दो तारों की सीध में कुछ दूरी पर उत्तर दिशा में ध्रुव तारा स्थित होता है। सप्तर्षि मण्डल ध्रुव तारे की परिक्रमा करता रहता है जो 24 घण्टे में पूरी हो जाती है। यह कभी रात्रि के आरम्भ, कभी मध्य और कभी ब्रह्ममुहूर्त में कालक्रमानुसार देखा जा सकता है।

वैसे सप्तर्षि मण्डल के सम्मुख ध्रुव तारे के दूसरी ओर W डब्ल्यू आकार में पांच तारे भी चक्कर लगाते हैं। ये सप्तर्षि मण्डल और पंचर्षि मण्डल दोनों पर स्पर आमने सामने रहते हुए ध्रुव तारे की परिक्रमा करते रहते हैं।

सप्तर्षियों के नामों के सम्बन्ध में लेखक का कहना है। ''वेदों का अध्ययन करने पर जिन सात ऋषियों का पता चलता है वे इस प्रकार हैं......।''

परन्तु लेखक ने वेद में इनका पता नहीं दिया है विभिन्न पुराणों में ऋषियों के उपलब्ध नामों का ही उल्लेख किया है। इस बारे में यही कहा जा सकता है— **मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना, तुण्डे तुण्डे सरस्वती** अर्थात् जितने मुंह उतनी बातें।

लेखक ने पुराणों में वैभिन्नय स्वयं ही दर्शाया है। वस्तुतः पुराण प्रामाणिक नहीं हैं। क्योंकि नाम तो इनका पुराण है परन्तु ये हैं अत्यन्त अर्वाचीन। यहां तक कि भविष्यपुराण तो अंग्रेजों के समय की रचना है—

रविवारे च सण्डे च फाल्गुणे चैव फरवरी।
षष्टिश्च सिक्सटिर्ज्ञेयः इत्युदाहरणमीदृशम्।।

इसमें सण्डे, फरवरी, सिक्सटी नाम अंग्रेजी के हैं, जिससे इनकी अर्वाचीनता स्वतः सिद्ध है।

राजा दशरथ के कुलगुरु वशिष्ठ वेदों के वशिष्ठ नहीं हैं। वाल्मीकि रामायण की रचना वैदिक संस्कृत में न होकर लौकिक संस्कृत में है। रामायण त्रेता युग की रचना है जबकि इससे पूर्व सत्ययुग भी तो बीत चुका था। रामायण काल में व्यवहार की भाषा लौकिक संस्कृत थी। परन्तु ऋषि—मुनि एवं विद्वान् वैदिक संस्कृत से परिचित थे, वेदवेत्ता थे। अतः वशिष्ठ, विश्वामित्र आदि का सम्बन्ध वेद—ऋषि और वैदिक काल से नहीं है। वैसे ही सीता, अनुसूया भी रामायण कालीन हैं। अन्य उल्लिखित ऋषि भी परवर्ती हैं, वेदमंत्रों के द्रष्टा नहीं।

इस प्रकार वेदमंत्र के सूक्तों पर वर्णित ऋषियों का वैभिन्न्य लेखक द्वारा लिखित ऋषियों से पूर्णतः स्पष्ट है। क्योंकि लेखक के ऋषि ऐतिहासिक हैं, जबकि वेदों में इतिहास नहीं है, यह पूर्व में ही स्पष्ट किया जा चुका है।

4—E, कैलाश नगर,
फाजिलका, पंजाब
मो. 09463428299

बौद्ध दर्शन और ऋषि दयानन्द

● वेद मार्तण्ड डा. महावीर मीमांसक

ऋषि दयानन्द जहाँ वेदों के पारदृश्वा विद्वान् थे, वहाँ वैदिक और अवैदिक, दोनों प्रकार के भारतीय दर्शन शास्त्रों के उद्भट ज्ञाता थे। उन्होंने अपने कालजयी ग्रन्थ 'सत्यार्थ–प्रकाश' में वेद विरुद्ध भारतीय मत–मतान्तर जिनमें प्रमुख चार्वाक, बौद्ध और जैनमत थे, उनके दार्शनिक ग्रन्थों के आधार पर उनका खण्डन किया क्योंकि उनके मतों की प्रामाणिक जानकारी उनके दार्शनिक ग्रन्थों से ही मिल सकती थी।

इसमें एक मत बौद्धमत है जो दार्शनिक रूप से अत्यन्त गम्भीर और वैदिक दार्शनिकों के साथ विशेष रूप से टक्कर लेता रहा है, क्योंकि वैदिक दार्शनिकों के साथ बौद्ध दार्शनिकों का विरोध प्रमुख रूप से (अन्य बातों के साथ) इसी बिन्दु पर रहा है कि बौद्ध दार्शनिक क्षणिक वादी (अनित्यत्ववादी) रहे हैं और वैदिक दार्शनिक सांसारिक अनित्यता (प्रकृति की विकृति से संसार की वस्तुओं अर्थात् संसार का बनते और बिगड़ते रहना) के अतिरिक्त ईश्वर, आत्मा और ईश्वरीय ज्ञान वेद को नित्य मानते हैं।

ऋषि दयानन्द ने बौद्धों का खण्डन उनके दर्शन के आधार पर 12वें समुल्लास (सत्यार्थ प्रकाश) में किया है। ऋषि दयानन्द ने बौद्ध दर्शन की प्रामाणिक जानकारी किस आधार पर किन स्रोतों से प्राप्त की, इस तथ्य की स्पष्ट विज्ञप्ति ऋषि सत्यार्थ–प्रकाश की भूमिका में देते हैं। वैसे तो ऋषि दयानन्द बौद्धों के दार्शनिक विद्वानों यथा नागार्जुन, धर्मकीर्ति, दिङ्नाग आदि के दार्शनिक ग्रन्थों के मर्मज्ञ थे, किन्तु सर्वसाधारण की जानकारी के लिए वे लिखते हैं ''इनमें से बौद्धों के दीपवंशादि प्राचीन ग्रन्थों में बौद्धमतसंग्रह'', ''सर्वदर्शनसंग्रह'' में दिखलाया है, उसमें से यहाँ दिखलाया है'' (सत्यार्थ–प्रकाश की भूमिका) इसके अभिप्राय हैं:–

1. बौद्धों के मौलिक प्राचीन दार्शनिक ग्रन्थ दीपवंशादि हैं, सर्वदर्शन संग्रह नहीं।

2. 'सर्वदर्शनसंग्रह' एक संग्रह ग्रन्थ है, मौलिक दार्शनिक ग्रन्थ नहीं, जिसमें बौद्धमतसंग्रह, दीपवंशादि बौद्धों के प्राचीन दार्शनिक ग्रन्थों से लिया गया है।

इतना ही नहीं ऋषि दयानन्द यह भी भली भाँति जानते थे कि ''सर्वदर्शनसंग्रह'' ग्रन्थ सभी दर्शनों का केवल एक संग्रह ग्रन्थ ही है, मौलिक दर्शन ग्रन्थ नहीं। इसीलिये इस ग्रन्थ में जहाँ वैदिक दर्शन–न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा (वेदान्त) दर्शनों का सार संग्रह रूप में दिया हुआ है, वहाँ अवैदिक दर्शन–चार्वाक, बौद्ध और जैन दर्शनों के मतों को भी सार संग्रह रूप में दे रखा है, यह किसी एक दर्शन का भी संग्रह नहीं, अपितु सभी दर्शनों वैदिक और अवैदिक–दर्शनों का सारसंग्रह ग्रन्थ है। इसीलिए ऋषि ने इस ग्रन्थ से न केवल बौद्ध दर्शन का सार सत्यार्थ–प्रकाश 12वें समुल्लास में उद्धृत किया है अपितु चार्वाक और जैन दर्शन का सार भी संग्रह रूप में इसी ''सर्वदर्शनसंग्रह'' ग्रन्थ से उद्धृत किया है। ऋषि ने ऐसा इसलिए किया कि इन अवैदिक मतों के दार्शनिक तत्व को जनसाधारण के समक्ष ऐसे उपस्थित करना था जिससे सामान्य जन इनकी दार्शनिक शब्दावली के जाल में न उलझ कर इसके सार को ग्रहण कर ले। ऋषियों की यही आर्ष बुद्धि होती है कि वे श्रोता और अध्येता को वाक्जाल और शब्दों के आडम्बर में न उलझाकर तत्व को सरल बनाकर श्रोता के समक्ष सुविधा और सरलता से बुद्धिगम्य रूप से प्रस्तुत कर देते हैं।

इतना ही नहीं अपितु सत्यार्थ–प्रकाश के 12वें समुल्लास में "बौद्धमत के विषय में संक्षेप में लिखते" हुए ऋषि बौद्धमत सम्बन्धी पहले ही श्लोक को सर्वदर्शन संग्रह से उद्धृत बौद्धदर्शन उद्धृत करते हैं और आगे भी बौद्ध दर्शन सम्बन्धी श्लोकों को **बौद्धदर्शन उद्धृत** दिखलाते हुए स्पष्ट मानते हैं कि वे श्लोक सर्वदर्शन संग्रह से उद्धृत हैं, इसीलिये उन श्लोकों में संख्या 4 में प्रयुक्त **"द्वादशायतनं बुधै"**, श्लोक संख्या 1 में प्रयुक्त **"बुद्धानां सुगतोदेव:"** और श्लोक संख्या 11 में प्रयुक्त **"शिश्रिये बौद्धभिक्षुभि:"** शब्दों से स्पष्ट है कि ये श्लोक मौलिक बौद्धदर्शन के नहीं हैं अपितु बौद्धों के दार्शनिक ग्रन्थों से सारसंग्रह के रूप में लिये गये **"सर्वदर्शनसंग्रह"** कार के अपने शब्द हैं, जो ऋषि ने बौद्धदर्शन कहकर उद्धृत किये हैं। वस्तुतः यही ऋषि दयानन्द की शैली है कि वे बार–बार **"सर्वदर्शनसंग्रह"** न लिखकर बौद्धदर्शन लिखना पर्याप्त समझते हैं। ऋषि ने आगे भी बौद्धों के मत को प्रदर्शित करने के लिए **"विवेक विलास"** ग्रन्थ में बौद्धों का मत दिखलाते हुए श्लोक उद्घृत किये हैं, जिनके अन्त में बौद्धदर्शन लिखकर श्लोक संख्या दी है, जिससे यह स्पष्ट है कि ऋषि द्वारा उद्घृत ये श्लोक ''विवेक विलास'' ग्रन्थ में बौद्ध का मत प्रदर्शित करने वाले श्लोक हैं। यही स्थिति ''सर्वदर्शन संग्रह'' से बौद्धमत प्रदर्शित करने वाले श्लोकों को बौद्धदर्शन लिखने से स्पष्ट है।

अब इन सब उद्धरणों से यह निर्विवाद स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द **"सर्वदर्शन संग्रह"** ग्रन्थ को बौद्धों का मौलिक दार्शनिक ग्रन्थ नहीं मानते, अपितु अन्य दर्शनों के सार संग्रह की भाँति इसे बौद्धों के दर्शन का भी सार संग्रह करने वाला ग्रन्थ मानते हैं। वास्तविक स्थिति भी यही है। ऋषि का दर्शन पूर्ण सत्य और निर्भ्रान्त है।

बौद्धमत के इसी ग्रन्थ में ऋषि ने बौद्धों की चार शाखायें बौद्धदर्शन के आधार पर दिखलाते हुए लिखा है कि ''यद्यपि इनका आचार्य बुद्ध उपदेश जताने वाला एक था तदपि सुनने वाले पुरुषों. और शिष्यों के बुद्धिभेद से चार प्रकार की शाखायें हो गई हैं। जैसे सूर्य के अस्त होने में जार पुरुष जार कर्म, चोर चोरी कर्म और पूर्ण विद्वान् सत्य आचरण करते हैं। समय एक और अपनी–अपनी बुद्धिभेद के अनुसार भिन्न–भिन्न चेष्टा करते हैं।''

ऋषि दयानन्द ने बौद्धों का खण्डन उनके दर्शन के आधार पर 12वें समुल्लास (सत्यार्थ प्रकाश) में किया है। ऋषि दयानन्द ने बौद्ध दर्शन की प्रामाणिक जानकारी किस आधार पर किन स्रोतों से प्राप्त की, इस तथ्य की स्पष्ट विज्ञप्ति ऋषि सत्यार्थ–प्रकाश की भूमिका में देते हैं। वैसे तो ऋषि दयानन्द बौद्धों के दार्शनिक विद्वानों यथा नागार्जुन, धर्मकीर्ति, दिङ्नाग आदि के दार्शनिक ग्रन्थों के मर्मज्ञ थे, किन्तु सर्वसाधारण की जानकारी के लिए वे लिखते हैं ''इनमें से बौद्धों के दीपवंशादि प्राचीन ग्रन्थों में बौद्धमतसंग्रह'', ''सर्वदर्शनसंग्रह'' में दिखलाया है, उसमें से यहाँ दिखलाया है'' (सत्यार्थ–प्रकाश की भूमिका) इसके अभिप्राय हैं:–

यह निदर्शन ऋषि ने **"सर्वदर्शन संग्रह"** ग्रन्थ में बौद्धदर्शन के प्रसंग में प्रदत्त प्रकरण से लिया है। वह प्रकरण इस प्रकार से है–**"यथांगतो रत्तमर्क:" इत्युक्ते जार–चोर–अनूचा न–आदम: स्वचेष्टानुसारेण अभिसरण–परस्व–हरण–सदाचरण–आदि समयं बुद्धयन्ते"** इसका भाषान्तर ऋषि के शब्दों में ऊपर दिया जा चुका है। ऋषि ने इस उक्ति को मूल संस्कृत में न देकर जनसाधारण की जानकारी के लिए हिन्दी भाषा में ही दिया है।

''सर्वदर्शनसंग्रह''पुस्तक के उपरिलिखित उद्धरण पर तीन बिन्दु (प्रश्न) विचारणीय बनते हैं, जिनका स्पष्टीकरण पाठकों की जानकारी के लिए आवश्यक है:–

1. क्या ''गतोऽस्तमर्क:'' वाक्य बौद्धदर्शन शास्त्र का है?

2. क्या इस निदर्शन में वर्णित जार, चोर और ज अनुचान के तीन कर्म अभिसरण, परस्व हरण और सदाचरण (पूजा–सन्ध्या वन्दना आदि) इन्हीं तीन कर्मों के समय का अवबोध ''सूर्य अस्त हो गया'' रहने से होता है?

3. क्या यह सदाचरण शब्द पारिभाषिक है जो इन्हीं कर्मों को अपनी परिभाषा (तकनीकी) में सीमित करके बांधता है?

इन तीनों प्रश्नों के प्रति ऋषि दयानन्द का उत्तर नकारात्मक है जो पूर्णतः सत्य है। यह हम अनुपद ही सिद्ध करेंगे।

1. यह किसी भी दर्शन शास्त्र (बौद्ध दर्शन समेत) का वचन नहीं है। दर्शन शास्त्र में प्रत्येक शब्द का अर्थ निश्चित होता है, किन्तु यहाँ तो **"मतोऽस्तमर्क:"** का एक निश्चित अर्थ नहीं है, तीन अर्थ तो कम से कम यहीं दे रखे हैं, जिनका अवबोध इस एक वाक्य के बोलने पर अलग–अलग व्यक्तियों को होता है। दर्शन शास्त्र में यह अर्थ का संकट पैदा नहीं होता, एक शब्द को चाहे कितने ही व्यक्ति सुनें सबको अर्थ का अवबोध एक समान ही होता है। वह दर्शन शास्त्र ही क्या रहेगा जिसमें शब्द और भाषा का अर्थ चूचू का मुरब्बा बनकर रह जाये। ऋषि दयानन्द दर्शन शास्त्र की भाषा की इस प्रकृति को बखूबी जानते और मानते हैं। इसीलिये ऋषि ने अर्थ की अनिश्चितता के लिये लिखा ''आचार्य बुद्ध उपदेश जनाने वाला एक था तथापि सुनने वाले पुरुषों और शिष्यों के बुद्धिभेद से–'' इत्यादि।

2. इस वाक्य से केवल तीन ही अर्थ, जो यहाँ दे रखे हैं, अवगत नहीं होते। इस वाक्य से इसके अतिरिक्त और भी कई अर्थों का अवबोध होता है, जैसे खेत में हल चलाने वाले कृषक को यह अवबोध होता है कि सूर्य अस्त हो गया है, अब काम छोड़ कर घर जाने का समय है, एक श्रमिक को यह अवबोध होता है कि अब सूर्य अस्त हो गया है और अब काम बन्द करने का समय हो गया है इत्यादि इत्यादि। इसीलिये यहाँ दो बार **"आदिम:"** और **"आदि"** शब्दों का प्रयोग हुआ है, एक बार जार–चोर–अनुचार के बाद, जिनको समय का अवबोध होता है और दूसरी बार ''अभिसरण–परस्वहरण–सदाचरण के बाद जिन कामों के करने का अवबोध उन उन व्यक्तियों को हुआ। कितने ही और और व्यक्तियों को भी जो भिन्न–भिन्न परिस्थितियों वाले हैं, उनको ''सूर्य अस्त हो गया'' यह वाक्य कहने पर परिस्थिति, कार्य और बुद्धि भेद से कितने ही अनेक और और कार्य करने का अवबोध हो सकता है। अवबोध की कोई सीमा निर्धारित नहीं है कि इतने ही प्रकार का अवबोध होगा।

ऋषि दयानन्द इस तथ्य से भी भलीभाँति परिचित थे कि यह दर्शन–शास्त्र की भाषा नहीं हो सकती और इस वाक्य से कितने ही अन्य कार्यों का अवबोध हो सकता है, केवल तीन ही प्रकार के अवबोध करवाने तक यह ताकत सीमित नहीं है। इसीलिये ऋषि इस वाक्य को, जिसमें तीन प्रकार के अवबोध की बात कही है, एक आचार्य बुद्ध उपदेश

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

☞ पृष्ठ 08 का शेष

बौद्ध दर्शन और ऋषि ...

की बात सुनने वाले पुरुषों और शिष्यों के बुद्धिभेद से चार शाखाओं में विभक्त होने के निदर्शन के रूप में प्रस्तुत करते हैं। ऋषि इस तथ्य को भलीभाँति जानते हैं कि यह वाक्य किसी भी दर्शन शास्त्र का वाक्य नहीं है, अपितु ध्वनिकाव्य का आदर्श वाक्य है। दर्शन शास्त्र में प्रत्येक शब्द का अर्थ निश्चित होता है, किन्तु काव्य शास्त्र में एक शब्द के अनेक अर्थ अभीष्ट माने जाते हैं, यही काव्य शास्त्र और साहित्य की श्रीवृद्धि है कि उसमें एक शब्द अनेक अर्थों को अभिव्यक्त करे। इसीलिये काव्यशास्त्री, साहित्यशास्त्री, भाषाशास्त्री और अर्थविज्ञान के विद्वान् इस तथ्य को भली भाँति जानते हैं कि शब्द के अर्थ की शक्ति अभिधा के अतिरिक्त लक्षणा और व्यञ्जना की भी होती है। किन्तु ध्वनिकाव्य शास्त्रियों ने एक ध्वनिशक्ति भी शब्द के अर्थों की मानी जो लक्षणा और व्यञ्जना शक्ति से यह भेद रखती है कि इन शक्तियों के द्वारा तो एक विशेष निश्चित शब्द अपने अभिहित अर्थ के अतिरिक्त एक और निश्चित अर्थ को लक्षित या व्यञ्जित करता है, किन्तु ध्वनि शक्ति के द्वारा एक सामान्य शब्द अनेक कितने ही अर्थों को ध्वनित कर सकता है जैसे वर्तमान प्रसंग में **गतोऽस्तमर्कः** (सूर्य अस्त हो गया) यह वाक्य करता है। इसी तथ्य को स्वीकार करके ध्वनि काव्यशास्त्र, ध्वन्या, लोक आदि की रचना हुई और इस सिद्धान्त को सभी संस्कृत साहित्य शास्त्रियों को स्वीकार करना पड़ा, और **"गतोऽस्तमर्कः"** यह वाक्य सभी संस्कृत साहित्य शास्त्रियों ने ध्वनिकाव्य का आदर्श वाक्य मानकर अपने अपने शास्त्रों में ध्वनि का शब्दार्थ शक्ति के साथ में उद्धृत किया। ऋषि दयानन्द इन तथ्यों को भली भाँति जानते थे।

3. ऋषि दयानन्द इस उद्धरण को पारिभाषिक (तकनीकी) नहीं मानते कि इसमें इतने ही उदाहरण आयेंगे जितने कि यहाँ गिनाये गये हैं। इसीलिये ऋषि इस उद्धरण में प्रयुक्त ''सदाचरण'' शब्द की व्याख्या शब्द बदलकर ''सत्याचरण'' शब्द द्वारा करते हैं। परिभाषा के शब्द तकनीकी होते हैं, जो बदले नहीं जा सकते। ऋषि जानते थे कि यह परिभाषा नहीं है अतएव सदाचरण शब्द के स्थान पर सत्याचरण शब्द बदल दिया। वस्तुतः यह परिभाषा नहीं, ऋषि ने इसकी परिभाषा नहीं दी। इसमें और कितने ही उदाहरण शामिल किये जा सकते हैं, जैसे यदि कोई अनूचान सायंकाल यज्ञ करता है तो उसे यज्ञ करने के समय का अवबोध होगा, संध्या करने वाले को संध्या के समय का, वेद पाठ करने वाले को वेदपाठ करने के समय का, देवालय (मन्दिर) जाने वाले को मन्दिर जाने के समय का, पूजा पाठ, वन्दना, आरती आदि के समय का अवबोध होगा। भिन्न–भिन्न सत्पुरुषों को अपनी अपनी धार्मिक क्रियाओं, अनुष्ठानों के करने के समय का अवबोध होगा।

और वह अवबोध होगा प्रसंग से। यहाँ प्रसंग है सूर्य के अस्त होने का, जो सायंकाल का अवबोधक है। अतः जब कोई व्यक्ति यह कहता है कि "सूर्य अस्त हो गया" और सुनने वाला व्यक्ति यदि धार्मिक, आस्तिक (अनूचान) है तो उसे इस वाक्य के सुनने पर अपने सायंकालीन करने योग्य धार्मिक अनुष्ठानों, सदाचरणों, श्रेष्ठ आचरणों के अनुष्ठान करने के समय का अवबोध (ध्वनित) होगा। यह प्रक्रिया जो ध्वनित अर्थ के अवबोध द्वारा **"गतोऽस्तमर्कः"** इस वाक्य के सुनने पर भिन्न–भिन्न प्रवृत्ति वाले लोगों को भिन्न–भिन्न क्रियाओं के करने के समय का अवबोध करवाती है जो क्रियाएँ (कर्म) उन उन लोगों को सूर्य के अस्त होने पर करनी होती हैं। अतः यहाँ ''सदाचरण'' जिसका शाब्दिक अर्थ ऋषि ने **"सत्य आचरण"** किया जो श्रेष्ठ आचरण का वाचक है, वे सत्य आचरण विद्वान् (धार्मिक) पुरुषों के लिए केवल उन सायंकालीन–सूर्य अस्त होने पर करने योग्य विशेष अनुष्ठानों तक सीमित होकर रह जाते हैं जो केवल सूर्य के अस्त हो जाने पर करने चाहियें और अन्य सामान्य सदाचरण–सत्य आचरणों का परिहार इस समय सीमा (सूर्य के अस्त होने का समय) से नहीं होता है जो सभी समयों में करने चाहियें। अतः सदाचरण शब्द कोई पारिभाषिक नहीं है अपितु अपने सामान्य शाब्दिक अर्थ द्वारा ही सूर्य के अस्त होने के ध्वनित अर्थ के प्रसंग में सीमित होने से कुछ विशेष अर्थ (करने योग्य कर्मों) का अवबोध करवाता है। यह अर्थ अवबोध की प्रक्रिया महर्षि जैमिनी ने अपने पूर्व मीमांसा दर्शन में ''एक वाक्यता'' द्वारा वर्णित की है। जैमिनी का सूत्र है, **"अर्थैकत्वाद एकं वाक्यं साकाङ्क्षां चेद विभागेस्यात्"** (पू मी 2 1 47) अर्थात् यदि शब्दों की दूरी होने पर भी वे एक अर्थ को प्रकट करते हैं तो वह एक ही वाक्य मानना चाहिये, यदि उन शब्दों को अलग–अलग रखने पर अर्थो की आकांक्षा बनी रहे तो यह अर्थावबोध की प्रक्रिया पू. मी. द्वारा प्रदशित वैदिक भाषा पर भी लागू होती है और लौकिक भाषा पर भी। अब इन शब्दों की एकवाक्यता ऐसे बनती है, **"गतोऽस्तमर्कः अनूचानः सदाचरणमवबुध्यते"** अर्थात् सूर्य अस्त हो गया, (यह कहने पर) अनूचान को सदाचरण (के समय का) का अवबोध होता है यही अर्थ विशेष की प्रक्रिया आधुनिक भाषा विज्ञान में अर्थ विज्ञान में भी समझायी जाती है। यहाँ **"अवबुध्यते"** शब्द विशेष व्याख्या की अपेक्षा रखता है।

निष्कर्ष यह है कि **"गतोऽस्तमर्कः"** ऐसा कहने पर अनूचान को उन सदाचरण, सत्य–आचरण, श्रेष्ठ कर्मों का अवबोध होता है जो सूर्य अस्त होने पर उसे करने चाहियें और वे सत्य–आचरण हैं यज्ञ, सन्ध्या, ध्यान, वन्दना, पूजापाठ आदि विशेष कर्म जो सायंकाल सूर्य अस्त होने पर करने होते हैं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि **"गतोऽस्तमर्कः"** ऐसा कहने पर अनूचान को उन सदाचरण, सत्य आचरण, श्रेष्ठ कर्मों के न करने (निषेध) का अवबोध होता है, जो सत्य आचरणों, श्रेष्ठ आचरणों में गिने जाने वाले सत्यभाषण, सदाचार, अस्तेय आदि सामान्य कर्म सार्वकालिक (सभी समयों में) पालन करने योग्य हैं। वे तो **"सत्यं वद"** आदि यथाविधान प्राप्त हैं ही।

ऋषि दयानन्द संस्कृत साहित्य शास्त्र और काव्यशास्त्र के भी मर्मज्ञ विद्वान् थे। उन्होंने अपने सभी मुख्य ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश', 'संस्कार विधि', 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' आदि का प्रारम्भ स्वरचित काव्यमय पद्य रचनाओं से किये है। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में ''अलंकार भेद विषय'' एक अलग स्वतंत्र विषय दिया है। वेद मन्त्रों में अलंकार प्रदर्शित करने के लिये अपने वेद भाष्य में स्थान–स्थान पर अलंकारों का उल्लेख किया है।

वस्तुतः यह ध्वनि काव्य का जाना माना उद्धरण है, जिसे सभी संस्कृत साहित्यकारों ने शब्द की अभिधा, लक्षणा और व्यञ्जना इन तीन आर्थिक शक्तियों के अतिरिक्त ध्वनिशक्ति को भी स्वीकारा है और उसी के उदाहरण के तौर पर इसे उद्धृत किया है। ''ध्वन्यालोक'' में इसकी विशेष विस्तृत व्याख्या है। सर्वदर्शनसंग्रहकार ने संस्कृत साहित्य शास्त्रों से यह उद्धरण इस तथ्य को बतलाने के लिये उद्धृत किया है कि किस प्रकार से बुद्ध के एक ही उपदेश को भिन्न–भिन्न प्रकार के श्रोता और शिष्यों ने उसे भिन्न–भिन्न रूप से समझा और एक बुद्ध की चार शाखायें बौद्ध धर्म के रूप में बुद्ध के नाम से चल पड़ीं। यह स्थिति महात्मा बुद्ध के निर्वाण के बहुत काल बीत जाने के बाद हुई, अतः यह उक्ति भी बुद्ध के निर्वाण के सैकड़ों वर्ष बाद, चार शाखाओं में बौद्ध धर्म विभक्त होने के बाद, उद्धृत की जाने लगी। यह बौद्ध दर्शन की मूल उक्ति है ही नहीं। ऋषि ने यही बात अपने शब्दों में कही है, यद्यपि सारभूत आधार यही उक्ति है। स्पष्ट है यह उक्ति बौद्ध दर्शन की नहीं है। इससे यह भी स्पष्ट है कि सदाचरण शब्द भी पारिभाषिक नहीं है और भी कितने ही सायंकालीन (सूर्य अस्त होने पर) किये जाने योग्य धार्मिक अनुष्ठानों, कृत्यों को इसमें शामिल किया जा सकता है। अर्थ का अवबोध एक वाक्यता के आधार पर ही होता है, जैसा हमने प्रदर्शित किया। इसीलिये ऋषि ने सत्यआचरण कहकर की। यदि यह शब्द पारिभाषिक होता तो ऋषि इसकी परिभाषा देते, वह भी एक मूल बौद्ध दर्शन से। इसे बदलते नहीं, क्योंकि पारिभाषिक (तकनीकी) शब्द को बदला नहीं जा सकता। मौलिक बौद्ध दर्शन में यह शब्द प्रयुक्त है ही नहीं। यह कहना कि पूजा पाठ आदि ही सत्य आचरण है, शेष शुभ कर्म, श्रेष्ठ कर्म सत्य–आचरण नहीं है, कहाँ की बुद्धिमत्ता है?

यहाँ यह विशेष उल्लेखनीय है कि क्या इससे अनूचान की सायंकालीन दिनचर्या निर्धारित हो गई है, वह सदाचरण–सत्याचरण सायंकाल (सूर्य अस्त होने पर) करे, शेष समय में सत्य आचरण अर्थात् श्रेष्ठ आचरण न करे, दिन भर असत्य आचरण ही करे? ऋषि पर यह आरोप (आक्षेप) नहीं बनता। सदाचरण जिसको ऋषि ने "सत्य आचरण" कहकर व्याख्यात किया, इस सत्य आचरण शब्द के द्वारा वे सभी श्रेष्ठ कर्म समझे जाते हैं, जो अनूचान सज्जन पुरुष जीवन भर सदा सभी समयों में करते हैं जैसे सच बोलना, सदाचार, ईमानदारी, अस्तेय आदि जो सार्वकालिक कर्म हैं, इनमें धार्मिक अनुष्ठान, पूजा–पाठ, ध्यान, सन्ध्या, यज्ञ, वन्दना आदि भी शामिल हैं। किन्तु धार्मिक पूजापाठ आदि कर्म करने का समय तो निश्चित है सायंकाल (प्रातःकाल भी), शेष सभी सत्यआचरण श्रेष्ठ कर्म सार्वकालिक हैं, सभी समयों में करने ही चाहियें। अब यदि कोई अनूचान दिन भर अपनी व्यस्तताओं में संलग्न होने के कारण सायंकाल (सूर्य अस्त होने पर) पूजा पाठ आदि निश्चित समय पर करता हो। सदाचरण–सत्यआचरणों का ध्यान रखने में भूल करता है और कोई दूसरा व्यक्ति यह कहता है कि सूर्य अस्त हो गया तो उसे उस समय विशेषतः करने योग्य पूजा–पाठ आदि कर्मों के करने का स्मरण (अवबोध) हो जाता है। इसीलिये इस वाक्य में ''इत्युक्ते'' शब्द बड़ा महत्वपूर्ण है कि किसी के कहने पर उस अनूचान को इन कर्मों के करने का समय (अवबोध) हो जाता है। और वह उस समय करणीय विशेष कर्म पूजा–पाठ आदि करता है। सामान्य सत्य आचरण श्रेष्ठ कर्मों को उस समय करना छोड़ दे या सामान्य श्रेष्ठ कर्म भी केवल उसी समय करे अन्य समयों में नहीं, यह अभिप्राय इस उक्ति से सर्वथा नहीं निकलता। अतः यहाँ दिनचर्या के निर्धारण का आरोप ऋषि पर लगाना शास्त्रों के ज्ञान से शून्यता का सूचक है।

ऋषि के प्रत्येक वाक्य और शब्द का गम्भीर प्रामाणिक शास्त्रीय विवेचन और प्रसंगपूर्वक व्याख्या करने की महती आवश्यकता है, अन्यथा बड़े–बड़े ऋषिभक्त विद्वान् भी लड़खड़ा सकते हैं।

वैदिक शोध सदन,
ए–3/11, पश्चिम विहार,
नई दिल्ली–110063

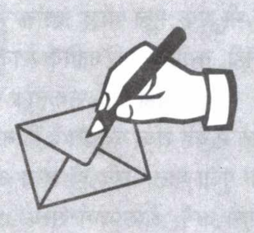

पत्र/कविता

स्वयं सुमेधानन्द बनो!

जिस पर गर्व किया करते वो स्वाभिमान सम्मान गया।
धुन का धनी त्याग की प्रतिमा देवोपम इन्सान गया।
हिम का आंचल गया देश का शौर्य शिखर ज्यों टूटा है,
किससे उपमा दूँ मित्रो! उपमेय गया उपमान गया।

शब्द–शब्द समिधा जैसा था ज्यों सुगन्ध से भरा पवन।
गैरिक वस्त्रों में मुस्काता रोम–रोम वैदिक आंगन।
आप हमारे बीच रहे तो हम सबसे धनवान रहे,
चले गये तो यूँ लगता है हम हो गये बहुत निर्धन।

आज आप बिन स्वामी जी सब खाली–खाली लगता है।
सबको उत्तर देने वाला आज सवाली लगता है।
एक जुझारू जूझ–जूझकर पाखण्डों को हरा गया,
आप गये क्या सारा मौसम धूर्त मवाली लगता है।

पावक की लपटों में पड़कर सोना कुन्दन बन जाता है।
भाव शुद्ध हो नन्हा धागा–बन्धन बन जाता है।
संघर्षों की भट्ठी में तप जाना छोटी बात नहीं है।
त्याग–तपस्या से मानव माथे का चन्दन बन जाता है।

रात्रि–जागरण ठीक नहीं दिन में सोने से क्या होगा।
मृत्यु रोग से मुक्त करे आँसू बोने से क्या होगा।
शीश झुकाकर परमपिता की इच्छा का सम्मान करो।
जाने वाला चला गया रोने–धोने से क्या होगा।

बदले में सम्मान मिलेगा यथायोग्य सम्मान करो।
संध्या–हवन सत्य पर चलकर नित ईश्वर प्रणिधान करो।
श्रद्धांजलि देने का सबसे सुगम 'मनीषी' मार्ग यही;
स्वामी जी के पथपर हँसकर अपना जीवनदान करो।

आर्य एकता के ध्वजवाहक सौम्य सजग मकरन्द बनो।
स्वच्छन्दों की त्वरित सरित् में अनुशासित ऋषिछन्द बनो।
शोक सभा प्रेरणा सभा बन जाये तो कुछ बात बने;
स्वप्न अधूरे पूरे करने स्वयं सुमेधानन्द बनो।

डॉ. सारस्वत मोहन 'मनीषी'
दिल्ली. मो. 9810835335

सिर्फ साईं बाबा ही क्यों

स्वयं संदिग्ध बने–निर्मल बाबा के भी कहने पर अनेक अंधश्रद्धालु लोग–अपने अपने पूजा घरों से शिवलिंगों को निकाल कर नदियों–तालाबों–मंदिरों में विसर्जित करने लगे। प्रभावहीन होते जा रहे शंकराचार्य जी के भी कहने पर ही सही, एक मांसाहारी मुस्लिम फकीर होने की सच्चाई जानकर सच्चे–हिंदू लोग अपने मंदिरों–पूजा घरों से साईंबाबा को हटा रहे हैं।

लोभी–पाखंडी पुरोहितों के कारण ऐसे बहु देवतावाद में उलझे–भेड़ियाघसानी–हिन्दुओं का अब पुनः ऐकेश्वरोपासना की ओर मुड़ने के ये शुभ संकेत हो सकते हैं।

धर्म के धूर्त–धंधेबाजों द्वारा तरह–तरह की कामनाओं को पूर्ण कर देने का झूठा प्रचार कर–कराके किस्म–किस्म के नये–नये देवी–देवताओं को पूजते फिरने की हिंदुओं में होड़ तो लगी हुई ही है। सदाचार और ईमानदारी से दूर ये स्वार्थांध लोग बिना विचारे ही देशी–विदेशी–अधर्मी–देवी–देवताओं को अपने पूजा घरों में भरते जा रहे हैं। इन सभी घुसपेठिये–भगवानों को चिन्हित कर–कर के निकालने की सख्त–ज़रुरत है।

पं. नेहरु कृत–'विश्व इतिहास की एक झलक', के पृष्ठ–694 में लिखा है– 'बेबीलोनी सभ्यता की देन–मूर्तिपूजा को बौद्धों ने ही सर्व प्रथम भारत में ग्रीस यूनान से लाया।' अद्वितीय वेदोद्धारक महर्षि दयानंद भी अपने क्रांतिकारी ग्रंथ–'सत्यार्थ–प्रकाश' में ऐसा ही लिखाहैं। वस्तुतः पूरे विश्व–मानवता के लिये एक निराकारेश्वर की उपासना के प्रवर्तक रहे–प्राचीनतम धर्मग्रंथ–वेद में कहीं भी मूर्तिपूजा का ज़िक्र नहीं है।

इसी तरह महाभारत, गीता और भागवत पुराण के रचना काल तक योगेश्वर श्रीकृष्ण के संग 'नर्तकी राधा' की कल्पना भी नहीं की गयी थी। बहुत बाद में– बारहवीं सदी के ब्रह्मवैवर्त पुराणकार ने राधा के संग श्री कृष्ण का इतना अश्लील–अभद्र चित्रण किया है कि 19वीं सदी के ऋषि बंकिमचंद्र को अपनी 'कृष्ण–चरित' पुस्तक में राधा के विरुद्ध पाठकों को सावधान ही करना पड़ा।

1970 के आसपास बनी फिल्म संतोषी माता के काल्पनिक मंदिर बनाना और शुक्रवार को अरबी प्रथानुसार खटाई रहित गुड़–चने बांटना तो हम सब के सामने से ही शुरू हुआ है। बंग्ला की सत्यनारायण पोथी में – "जे राम, सेई रहीम, वेद–कुराने किछु ना अंतर, येई साधु–पीर–फकीर–पैगंबर बोले।"– लिखा होना भी साईं बाबा का किसी धर्मग्रंथ के गर्भगृह में घुसा होना से कम आपत्तिजनक नहीं है।

धर्म के सच्चे साहसी पहरेदारों (जिनकी संख्या हिंदुओं में नगण्य है) का कर्तव्य है कि ऐसे अनेक घुसपेठियों व प्रतिक्षप्तांशों की, दुराग्रह मुक्त होके, धर्मग्रंथों से सफाई–विदाई करा के ही दम लें।

– पं. आर्य प्रसाद प्रह्लाद गिरि (आर्य गिरी)
निगेश्वर मठ, निंगा,
आसनसोल (प. बंगाल), मो. 9735132360

****

पंजाबी सभ्यता संस्कृति की शिक्षा

दैनिक जागरण से यह ज्ञात हुआ कि जी. एन.डी.यू. के स्कूल आफ पंजाबी स्टडीज के सेवानिवृन्त वरिष्ठ शिक्षक स. परमजीत सिंह सिद्धू अमेरिका में बसे पंजाबी युवकों को पंजाबी संस्कृति को शिक्षा देने हेतु वहां के शिक्षकों को पारंगत करने के लिए अमृतसर में शिक्षा दे रहे हैं। उनका यह प्रयास अत्यन्त सराहनीय है। परन्तु मैं उनका ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि उन्होंने अपनी शिक्षा में जो सर्वप्रथम पाठ पढ़ाया, वह ''तमसो मा ज्योतिर्गमय'' का था। जो भारतीय संस्कृति के उच्च आदर्शों को संजोए हुए है। इसे आपने ऋग्वेद का श्लोक बताया है। वस्तुतः यह सत्य नहीं है। यह उक्ति 'शतपथ ब्राह्मण एवं बृहदारण्यकोपनिषद् अ 1. मन्त्र 28 से उद्धृत है। वेदों में श्लोक नहीं अपितु मन्त्र होते हैं। श्लोक लैकिक संस्कृत में होते हैं। यदि किसी वचन के ग्रन्थ का पता ज्ञात न हो तो सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि संस्कृत में ऐसा कहा गया है अथवा यह संस्कृत की उक्ति है।

आशा है प्राध्यापक महोदय भविष्य में ऐसी प्रस्तुति की प्रामाणिकता का भी ध्यान रखेंगे।

वेद प्रकाश शास्त्री
मो. 09463428299

****

जो संयम से रहता है वही सुखी रहता है।

सन्ध्या हवन के बाद आनन्द स्वामी जी ने अपने प्रवचन में चार 'स' अपनाने का उपदेश दिया। पहले 'स' से सन्ध्या करना, दूसरे 'स' स्वाध्याय करना, तीसरे 'स' से सत्संग में जाना, चौथे 'स' से सेवा करने की प्रेरणा दी। मै इसमें पाँचवा 'स' और जोड़ना चहाता हूँ जिससे संयम बनता है। जो संयम से रहता है वह सुखी रहता है। जो मात्र इन्द्रियों का दास बनकर रहता है वह दुखी रहता है। बिना संयम के जीवन ऐसा है जैसे बिना ब्रेक की गाडी। जिस गाड़ी में ब्रेक नही है वह कहीं भी दुर्घटना ग्रस्त हो सकती है। अतः जीवन में संयम का होना भी बहुत आवश्यक है।

देवराज आर्य मित्र
हरी नगर, नई दिल्ली–64

****

☞ पृष्ठ 05 का शेष

प्रेरणादायी प्रसंग...

उस जिद्दी महिला को बहुत समझाया पर जब वह किसी तरह सीधे रास्ते पर नहीं आई तो सीधे-सीधे कहा या तो तुम वर्तमान चुने अधिकारियों को मंदिर का अधिकार सौंपो अथवा मैं अभी डीडवाना की एस.डी. एम. कोर्ट में यह वाद पेश करता हूँ कि यह मुझे अपने धार्मिक कर्त्तव्य (संध्या आदि) यहां करने से रोकती है। इस कथन मात्र से वह सीधे रास्ते पर आ गई और समझौते के लिए तैयार हो गई।

आर्य समाजी स्टेशन अधीक्षक ने आर्य भाई की मदद की

ऋषि दयानन्द ने प्रथम बार आर्य समाज के 28 नियमों को निर्धारित करते समय नियम यह बनाया था कि सामाजिक या लौकिक आवश्यकता के लिए अपने आर्य भाई को वरीयता देना उचित है। यह बात 1983 की है। स्वामीजी के निर्वाण का शताब्दी वर्ष अजमेर में मनाया जा रहा था। मेरी पुस्तक नवजागरण के पुरोधा दयानन्द सरस्वती का लोकार्पण राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमंत्री स्व. शिवचरण माथुर ने किया था जो मंच पर मेरे समीप ही बैठे थे। मेरे पास अजमेर स्टेशन के स्टेशन अधीक्षक कोई हरियाणा निवासी बैठे थे जिनसे वार्तालाप का प्रसंग आया तो मैंने कहा मुझे अजमेर से जोधपुर जाना है। प्रथम श्रेणी का टिकट भी है लेकिन अभी कन्फर्म नहीं है। इस पर रेलवे अधिकारी बोले आप ऋषि दयानन्द के जीवनी लेखक हैं, आप इस सुविधा से वंचित क्यों रहें। कल मेरे दफ्तर में आइये, आपको रेलवे अधिकारी के कोटे से कन्फर्म टिकट मिल जाएगा। वैसे ही हुआ और मेरी यात्रा निर्विघ्न समाप्त हुई। आर्य समाज के प्रथम निर्मित (1875 में बम्बई में बनाया गया) नियम ने एक आर्य के लिए यह आचरणीय बनाया कि आपद विपद में अपने सहकर्मी को यथावश्यकता मदद करें।

कृतज्ञ छात्र का किस रूप में गुरु दक्षिणा देने की

उस दिन मैं दिल्ली मेल से श्री गंगानगर जा रहा था। आरक्षित डिब्बा पर्याप्त पीछे होने तथा मेड़ता रोड स्टेशन पर दौड़ भाग में टी स्टाल पर जाकर दो कप चाय (सपत्नीक था) लाना मुश्किल दिखाई दे रहा था। तथापि प्रयास करना चाहिए सोच कर बढ़ चला। देखा सामने सीटी हाथ में लिए गार्ड बाबू चले आ रहे हैं। हड़बड़ाहट में मुझे देखा तो पता चला कि गार्ड महाशय मेरे पुराने विद्यार्थी गोपालशरण शर्मा हैं। लोहे के बिल्ले से नाम का पुनः स्मरण हो गया। उन्होंने मुझे आश्वस्त करते हुए कहा कि आप निश्चित होकर चाय ले आयें तथा गुरुआनी जी से मेरे नमस्ते निवेदन करें। जब तक आप चाय लेकर स्वस्थ्य चित्त डिब्बें में नहीं बैठेंगे तब तक दिल्ली मेल यहां से सरकेगी भी नहीं। मैं इस अद्भुत गुरु दक्षिणा को देख कर विस्मय विमुग्ध था।

वह स्वागत जो याद रहेगा

मुझे मुजफ्फरपुर विश्वविद्यालय के एक पीएचडी छात्र की उपाधि के लिए मौखिक परीक्षा लेनी थी। मैने उसके निर्देशक प्रोफेसर को अपने मुजफ्फरपुर आगमन की अग्रिम सूचना वे ट्रेन का नाम-नम्बर भी सूचित कर रखा था। मेरा यह स्वभाव है कि चाहे किसी भी कारणवश जाना हो तत्रस्थ आर्य समाज को अपने कार्यक्रम की सूचना अवश्य दे देता हूँ। तथैव मु.पुर आर्य समाज को भी मेरे आने का पता था। ज्यों ही मैं गाड़ी से उतरा मैंने अपने अतिथि प्रोफेसर के लिए सर्वत्र तलाश की, वे महाशय नदारद थे। मुझे सुखद आश्चर्य हुआ जब मैंने आठ-दस व्यक्तियों को वैदिक धर्म की जय और ऋषि दयानन्द की जय के नारे लगाते टोलीबद्ध लोगों को अपने समीप आकर नमस्ते करते पाया। परिचय मिला, पन्नालाल आर्य प्रधान आ. स.। पता लगने पर ज्ञात हुआ ठीक सूचना न मिलने अथवा समय से कुछ पूर्व आ जाने के कारण शोध परामर्शक पर गाड़ी पर नहीं पहुंचे जिसके लिए उन्होंने बाद में खेद प्रकट किया। परन्तु मेरे कार्यक्रम, निवास, भोजन यहां तक कि सायंकाल आर्यसमाज में व्याख्यान तथा वहीं (आर्य जी के सौजन्य से) विश्राम आदि सम्पन्न हो गये। ऐसे अप्रत्याशित आतिथेय पन्नालालजी पक्के ऋषि भक्त थे।

विनम्र शिष्टाचार

उस दिन मैं जोधपुर रेलवे स्टेशन के आरक्षण काउंटर पर खड़ा था। मेरा नम्बर आया और लिपिक ने मेरा टिकट बना दिया। मेरी नज़र उस क्लर्क की खिड़की पर लगी नेम प्लेट पर गई तो पता चला की यहां कोई ईसाई सज्जन कार्यरत हैं। लगभग 10 बजे का समय था और दफ्तर की हर मेज पर वेटर चाय का कप रख रहा था। क्लर्क ने प्याला मुझे पेश किया, मैने धन्यवाद तो किया ही, साथ ही उस ईसाई बन्धु की उदारता, विनम्रता सौजन्य और शिष्टाचार के प्रति मेरे मन ही मन सम्मान का भाव भी जगा।

अनजान ग्रहस्थ के मेहमान बने

हिंदी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओं को केन्द्र उन दिनों उदयपुर था और मैं तथा मेरा मित्र दाऊलाल एक लोकल ट्रेन से अनजान अपरिचित नगर उदयपुर के स्टेशन पर उतर रहे थे। सोच रहे कि यदि स्टेशन या समीप कोई धर्मशाला है या नहीं? यह सहयात्री सज्जन ने कहा आप तो परीक्षा देने के लिए चार दिन के लिए आये हैं। आपको यदि स्वीकार हो तो मेरा एक नया बना घर आपको निवासार्थ दे दूंगा। अन्य विकल्प न देख कर तथा उक्त व्यक्ति का स्वाभाव जानकर इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। जगदीश चौक में सुनारों के मोहल्ले में उक्त भंवरलाल जी स्वर्णकार का एक नव निर्मित मकान हमारे निवास के लिए दे दिया। हमने बेशक उनसे कह दिया कि भोजन हम अपने व्यय से कर लिया करेंगे। चार दिन में साहित्य रत्न के चार पेपर निर्विघ्न समाप्त हो गये तो भंवरलालजी का आग्रह था कि विदाई से पहले हम उनके घर भोजन करें। वैसा ही हुआ और हम इससे पूर्व से अज्ञात, अपरिचित मेजबान के उदार कृत्य को सच्चे अतिथि यज्ञ का अधिमान उक्त सोनीजी को दिया। कालान्तर में वे जब एक बार कार्यवश जोधपुर आये तो उनका आर्यजनोचित स्वागत और आतिथ्य करना कर्त्तव्य था।

परिशिष्ट

दुर्गा पूजा में जमींदार की देवी पूजा में बलिदानों की संख्या क्यों कम हुई?

ब्रह्म समाज के आचार्य महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर समय-समय पर गृहस्थ तथा जमींदारी के कार्यों से अवकाश निकाल कर शिमला के पार्श्ववर्ती एकान्त में उपासना हेतु चले जाते थे। इसकी चर्चा जब परमंहस रामकृष्ण के शिष्य मण्डल में चली तो गृहस्थ से पूर्ण निवृत्त हुए बिना उपासना हेतु महीनों तक पर्वतीय प्रदेश में रहने पर व्यंग करते हुए रामकृष्ण ने वृद्ध ठाकुर महाशय की निराकार उपासना को उस बूढ़े का मजबूरन शाकाहारी बन जाना बतलाया जो अब अन्तहीन हो जाने के कारण बलिपशु की हड्डियों को चबाने की सामर्थ्य खो बैठा है। आक्षेपात्मक बात यह थी कि आचार्य ठाकुर का स्वगृहस्थ पालन तथा सच्चिदानन्द परमेश की भक्ति दोनों ही सत्य थी। वे व्यर्थ की भावुकता को भक्ति का नाम नहीं देते थे। इन्हीं देवेन्द्र बाबू ने स्वामी दयानन्द को 1813 में कलकत्ता के जोड़ा सांको मोहल्ले स्थित अपनी ढाउपाड़ी (राजा प्रसाद) में ब्रह्म उत्सव (माधी पूणिमा) में आमंत्रित किया तथा प्रवचन कराया। उस समय देवेन्द्र बाबू के सभी बच्चे आशीर्वादार्थक उपस्थित थे और बालक रवि को भी संन्यासी का आशीर्वाद मिला था।

315 शंकर कालोनी
श्रीगंगानगर

सितम्बर में होगा आर्य समाज डालीगंज लखनऊ का शताब्दी समारोह

आर्य समाज डालीगंज, लखनऊ अधिष्ठाता श्री सेवक राम आर्य द्वारा प्राप्त पत्र के अनुसार आर्य समाज, डालीगंज शताब्दी समारोह 18,19,20 सितम्बर 2015 को छत्रीपति सभागार, रामाधीन सिंह कालेज, आईटी चौराहा, लखनऊ में समारोह पूर्वक आयोजित किया जायेगा है। जिसमें श्री देवेन्द्र पाल वर्मा स्वामी धर्मेश्वरनन्द सरस्वती, श्री आनन्द कुमार आर्य आदि नेता, स्वामी आर्यवेश प्रो. प्रशस्थमित्र शास्त्री डॉ., प्रियंवदा वेदभारती आदि विद्वान एवं विदुषी तथा डॉ. कैलाश कर्मठा, श्री सत्यप्रकाश आर्य, पं. सीताराम आर्य आदि भजनोपदेशक पधार रहे हैं। इस समारोह में वैदिक यज्ञ, व विज्ञान सम्मेलन, महिला सम्मेलन, राष्ट्र सुरक्षा सम्मेलन, युवा स्वास्थ्य और योग सम्मेलन आदि कार्यक्रमों का आयोजन किया जायेगा।

टंकारा में होगा बोधोत्सव का आयोजन

मन्त्री महर्षि दयानन्द जन्म स्थान ट्रस्ट की ओर से प्राप्त सूचना के अनुसार प्रतिवर्ष की भांति आगामी वर्ष में महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में शिवरात्रि के पावन पर्व पर भव्य ऋषि बोधोत्सव का आयोजन रविवार, सोमवार, मंगलवार दिनांक 06.07.08 मार्च 2016 को किया जायेगा। ट्रस्ट ने निवेदन किया है कि आर्यजन यह तिथियाँ अभी से अंकित कर लेवें और इन तिथियों में अपनी आर्य समाज एवं अपनी संस्था का कोई कार्यक्रम न रखकर उक्त समारोह में अधिक से अधिक आर्य जनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। मंत्री जी के अनुसार आवास एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी।

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 19-20/8/2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार में नवीन यज्ञशाला का हुआ शिलान्यास

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली की एक ऐतिहासिक संस्था है जिसके माध्यम से आर्य समाज के लिए विद्वान् उपदेशकों को तैयार करने का कार्य किया जाता है। हाल ही में इस ब्राह्म महाविद्यालय में नवीन यज्ञशाला को बनाने के सक्रिय प्रयास हुए हैं। इस यज्ञशाला का शिलान्यास सांसद दुष्यंत चौटाला के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित श्री रणवीर जी गंगवा, श्री वेद नारंग व श्री अनूप धानक द्वारा सम्मिलित रूप से किया गया। इस अवसर पर हुए यज्ञ में प्रो. नेपाल सिंह वर्मा (सपत्नीक) मुख्य यजमान के रूप में उपस्थित थे। डॉ. रविदत्त वर्मा के ब्रह्मत्व में हुए इस यज्ञ में डॉ. सुषमा आर्या (यमुना नगर) और उनके बड़े भ्राता सुधीर आर्य (गाजियाबाद) ने सम्मिलित होकर इसकी शोभा बढ़ाई। यज्ञोपरांत एक विशेष सभा का आयोजन किया गया जिसमें श्री रमेश लीखा (सचिव, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति) ने अध्यक्ष–पद से सम्बोधन देते हुए महाविद्यालय का इतिहास प्रस्तुत किया। विशिष्ट अतिथि के रूप में डॉ. सुषमा आर्या, प्राचार्या डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्स, यमुना नगर उपस्थित हुई जिन्होंने अपने व्यक्तिगत पुनीत संसाधनों से एक लाख रुपये की राशि इस यज्ञशाला के निर्माणर्थ भेंट की। दयानन्द कॉलेज, हिसार के नव–नियुक्त प्राचार्य डॉ. पवन शर्मा ने अपने सहयोगियों सहित उपस्थिति दर्ज की। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा के प्रधान श्री के.एल. खुराना जी भी इस अवसर पर उपस्थित हुए और उन्होंने सभा को सम्बोधित किया।

इस अवसर पर स्वामी माधवानन्द सरस्वती, ब्रह्मचारी आयार्य सानन्द जी तथा वैदिक आचार्य डॉ. रविदत्त शास्त्री ने अपनी आध्यात्मिक उपस्थिति से इस उत्सव को गरिमा प्रदान की।

श्री दुष्यंत चौटाला (सांसद) के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित श्री गंगवा ने इस यज्ञशाला के निर्माण के लिए सांसद–निधि से अधिक से अधिक राशि प्रदान करने का संकल्प व्यक्त किया। सभा में उपस्थित अनेक दानी महानुभावों ने यज्ञशाला के निर्माणर्थ दान राशि दी।

श्री सत्यपाल आर्य, सहमंत्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा ने उपस्थित अतिथियों, श्रोताओं और दानी महानुभावों का धन्यवाद ज्ञापित किया। यज्ञशाला के शीघ्र ही निर्मित हो जाने की संभावना है जिससे महाविद्यालय में शिक्षा ग्रहण कर रहे ब्रह्मचारी छात्रों, आर्य समाज और दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय को विशेष लाभ होगा।

अमृतसर कम्पनी बाग़ में गूंजे वैदिक भजनों के स्वर

डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल, अमृतसर द्वारा आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब के तत्वावधान कम्पनी बाग़, अमृतसर में वैदिक भजन संध्या का आयोजन किया गया।

इस वैदिक भजन संध्या के अवसर पर प्रि. डा. नीलम कामरा, प्रधाना आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब एवं डॉ. राजेश कुमार विशेष रूप से उपस्थित थे। विद्यालय की प्रिंसीपल अंजना गुप्ता ने उपस्थित आर्यजनों का स्वागत

वैदिक भजन संध्या में प्रख्यात अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के भजनोपदेशक पं. सत्यपाल पथिक जी ने अपने सुमधर भजनों द्वारा उपस्थित आर्यजनों को आनन्द विभोर कर दिया। आर्यसमाजी श्री इन्द्र पाल आर्य द्वारा 'भक्ति रस लहरी' सुंदर एवं समधुर भजन प्रस्तुत किया गया। पं. दिनेश पथिक जी द्वारा भी सुन्दर भजनों के गायन श्रोताओं को भाव विभोर किया गया। वैदिक भजनों से सम्पूर्ण कम्पनी बाग दिव्य संगीत से गूँज उठा।

इस अवसर पर डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल के विद्यार्थियों के साथ–साथ उनके अभिभावक भी उपस्थित थे। बाग में सांयकाल भ्रमण करने आए लोग भी भजनों की मधुर ध्वनि से आकर्षित होकर इस वैदिक भजन संध्या का संध्या का आनन्द लेने पहुँच गए। लगभग 600 से अधिक लोग इस वैदिक भजन संध्या में सम्मिलित हुए।

विद्यालय के छात्र–छात्राओं द्वारा भजन 'ओ३म् नाम का जाप करो' का गायन किया गया। विद्यालय के संगीत अध्यापक श्री मणि कुमार 'जपो ओ३म् नाम', अध्यापिका कुमारी मीना द्वारा 'ईश वंदना' एवं अध्यापक श्री ओम प्रकाश वर्मा द्वारा भजन 'अमृत वर्षा' का गायन किया गया।

डी.ए.वी. इंटरनैशनल द्वारा इस वैदिक भजन संध्या में सम्मिलित होने वाले समस्त आर्यजनों को वैदिक साहित्य वितरित किया गया।

इस वैदिक भजन संध्या के अवसर पर पं. सत्यपाल पथिक, श्री इन्द्रपाल आर्य जी पं. दिनेश पथिक को स्मृति चिह्न भेंट कर सम्मानित किया गया। विद्यालय के संगीत शिक्षकों को भी सम्मानित किया गया। विद्यालय की छात्रा 'रूपम' को भी दस हजार रूपए नकद एवं पुष्प माला देकर सम्मानित किया गया।

प्रिंसीपल अंजना गुप्ता ने इस महान अवसर को सफल बनाने वाले सभी महानुभावों को धन्यवाद दिया।सभी श्रोतागणों ने इस पावन अवसर पर अनंत आनंद के साथ–साथ तृप्ति को भी अवसर प्राप्त किया। कार्यक्रम का समापन शांति पाठ से हुआ।

डी.ए.वी. तलवंडी भाई में चरित्र निर्माण शिविर आयोजित हुआ

शाह बलवन्त राय डी.ए.वी. सीनियर सैकण्डरी पब्लिक स्कूल, तलवंडी भाई में चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर में विद्यालय के लगभग 90 छात्र एवं छात्राओं ने भाग लिया। दिन की शुरुआत गायत्री मन्त्र के पवित्र उच्चारण से होती रही एवं दिन का पहला कार्यक्रम हवन से आरम्भ होता रहा। प्रतिदिन हवन के बाद संगीत अध्यापक के द्वारा भजन तथा उसके बाद आचार्य श्री नारायण देव जी द्वारा प्रवचन दिए जाते थे। उनके प्रवचनों से सभी विद्यार्थी तथा अध्यापक अत्यन्त प्रभावित हुए। शिविर में आचार्य श्री नारायण देव जी द्वारा बच्चों को प्रतिदिन योगाभ्यास करवाया जाता था।

शिविर के अन्तिम दिन आदरणीय श्री मूल चंद कुमार जी (सदस्य स्थानीय प्रबन्धक कमेटी) ने सभी लोगों का धन्यवाद किया तथा आदरणीय श्री मूल चंद कुमार जी एवं श्री अमृत लाल बांसल ने आचार्य श्री नारायण देव जी को सम्मानित किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**